शैक्षणिक

संदर्भ

वर्ष: 16 अंक 92 (मूल क्रमांक 149)
नवम्बर-दिसम्बर 2023 मूल्य: ₹ 50.00

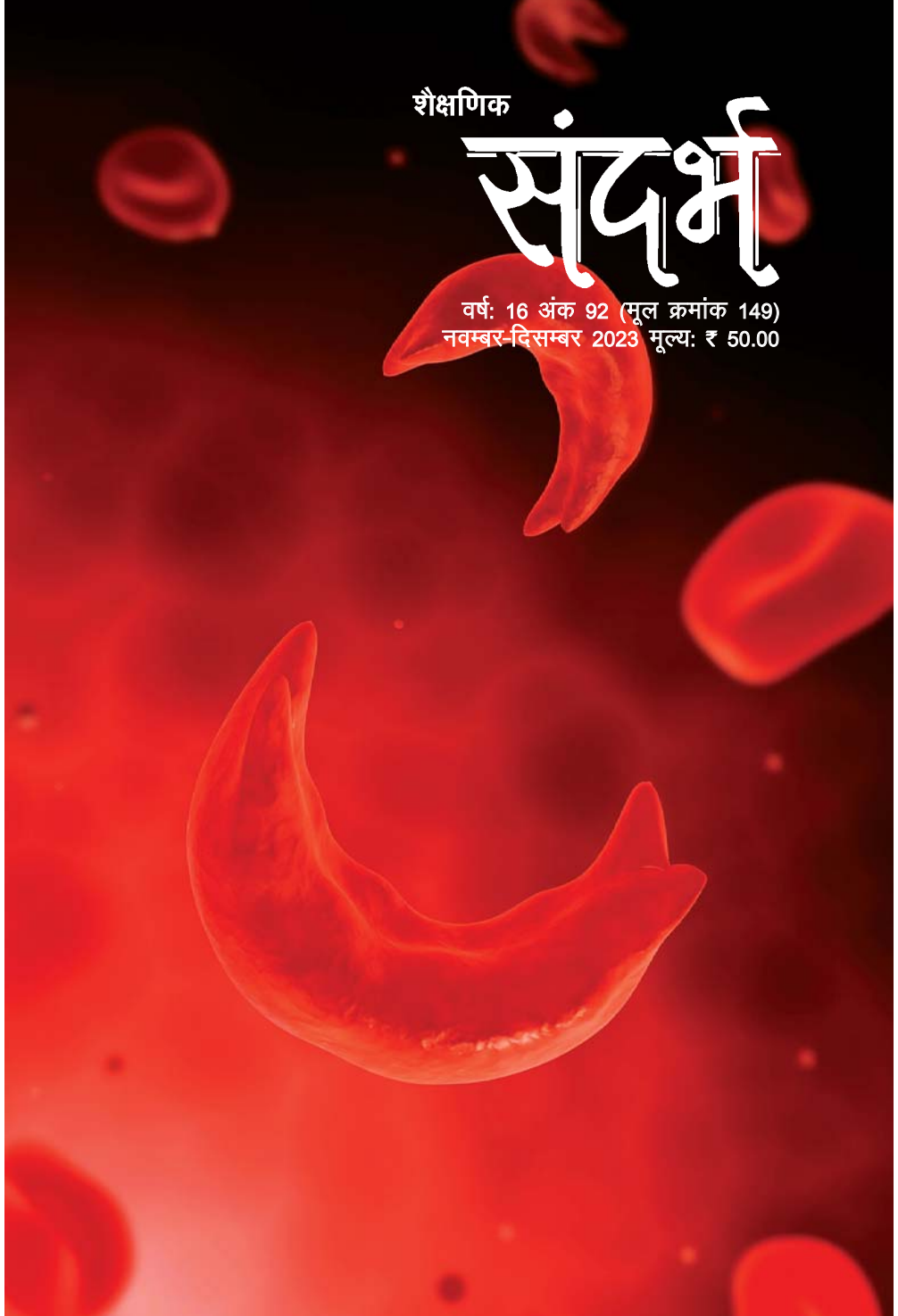

सम्पादन
राजेश खिंदरी
माधव केलकर

सह-सम्पादक
पारुल सोनी

सहायक सम्पादक
अतुल वाधवानी

सम्पादकीय सहयोग
सुशील जोशी
उमा सुधीर

आवरण
राकेश खत्री

वितरण: झनक राम साहू

सहयोग
हरिओम
कमलेश यादव

शैक्षणिक

संदर्भ

वर्ष: 16 अंक 92 (मूल क्रमांक 149)
नवम्बर-दिसम्बर 2023

मूल्य: ₹ 50.00

एकलव्य फाउण्डेशन
जमनालाल बजाज परिसर
जाटखेड़ी, भोपाल-462 026 (म.प्र.)
फोन: +91 755 297 7770, 71, 72, 4200944
www.sandarbh.eklavya.in
सम्पादन: sandarbh@eklavya.in
वितरण: circulation@eklavya.in

अब *संदर्भ* आप तक पहुँचेगी रजिस्टर्ड पोस्ट से।

सदस्यता शुल्क	एक साल (6 अंक)	तीन साल (18 अंक)	आजीवन
	450.00	1200.00	8000.00

मुखपृष्ठ: सिकल रक्त कोशिका की तस्वीर। हँसिए के आकार की इस कोशिका के बगल में सामान्य लाल रक्त कोशिकाओं को देखा जा सकता है। हँसिए का आकार लेने और सख्त हो जाने के कारण ये कोशिकाएँ रक्त वाहिकाओं में रक्त के बहाव को अवरुद्ध करती हैं, और इस तरह ये सिकल सेल एनीमिया नाम की बीमारी की वजह बनती हैं। इस बीमारी के लिए किस तरह के इलाज उपलब्ध हैं, जानिए पृष्ठ 5 पर।

पिछला आवरण: राइट ऑफ डर्बी द्वारा चित्रित *अ फिलॉसॉफर लेक्चरिंग ऑन द ऑरेरी* (1766)। ऑरेरी, यानी सौर मण्डल का यांत्रिक मॉडल, पर लेक्चर देता एक दार्शनिक। अपने लेक्चर में उस दार्शनिक ने आकाशीय पिण्डों की गति की क्या व्याख्या की होगी, यह तो शायद उन बच्चों को ही पता होगा जो उस मॉडल से अभिभूत हुए नज़र आ रहे हैं। मगर इन पिण्डों की गति की एक व्याख्या उमा सुधीर ने भी की है, जिसे पृष्ठ 11 पर पढ़ा जा सकता है।

यह अंक त्रिवेणी एजुकेशनल ट्रस्ट के वित्तीय सहयोग से प्रकाशित किया जा रहा है।

LINK : Cover 1 - https://www.verywellhealth.com/sickle-cell-anemia-2861015
Cover 3 - https://bestwallpapers.in/ship-ocean-water-blue-anchor-storm-4k-wallpaper/
Cover 4 - https://en.wikipedia.org/wiki/File:Wright_of_Derby,_The_Orrery.jpg

हमारा आगामी प्रकाशन

अचरज बंगला

संकलन: किशोर पंवार

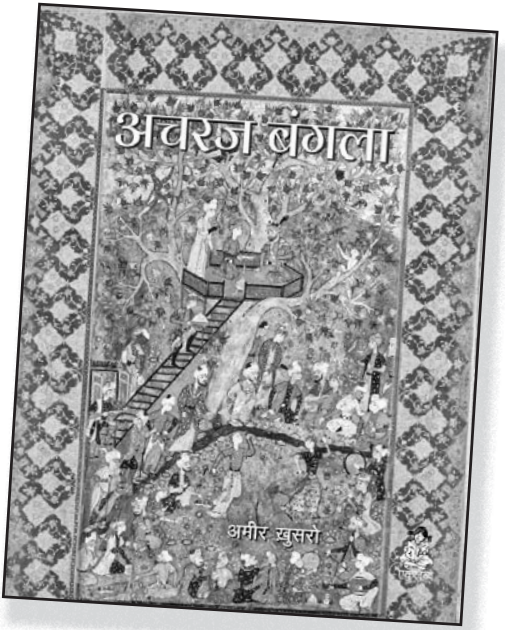

हमारे आसपास दिखने वाले पेड़-पौधों व जीव-जन्तुओं पर लिखी गई अमीर खुसरो की पहेलियाँ जिनको पढ़कर साहित्यिक आस्वाद तो होता ही है, प्रकृति को करीब से देखने-जानने की जिज्ञासा भी मन में उभरती है।

अलग अन्दाज़ में प्रस्तुत यह किताब बच्चों, शिक्षकों व आम पाठकों को ज़रूर पसन्द आएगी।

एकलव्य

अपनी प्रति बुक कराने के लिए सम्पर्क करें...

फोनः **+91 755 297 7770-71-72;** ईमेलः **pitara@eklavya.in**

www.eklavya.in | www.eklavyapitara.in

डेनिस सलिवन, टोपोलॉजी और बेहतर गणित...

गणित की एक ऐसी शाखा जिसमें ज्यामितीय आकृतियों के उन गुणों का अध्ययन किया जाता है जो उन आकृतियों के रूपान्तरित होने के बाद भी संरक्षित रहते हैं – टोपोलॉजी। अध्ययन के इस लगभग नवजात विषय का उपयोग अब राजनीतिक चुनावों की न्यायसंगतता जाँचने के लिए भला कैसे किया जाता है? कौन हैं डेनिस सलिवन जिनके बेमिसाल योगदान से इस विषयक्षेत्र के विकास में नई गति आ गई? और क्या कारण हैं कि आम तौर पर भारत में गणित शिक्षण दुनिया को समझने की जिज्ञासा जगाने की बजाय एक डरावने मंज़र-सा नज़र आता है? अजय शर्मा का यह लेख ऐसे कई सवालों पर रोशनी डालता है और गणित, शिक्षण व दुनिया से विस्मित होने को उद्दीपित करता है।

22

ऐंग गाँव की चेंग कथाएँ: भाग 1

यह आम बात है कि शिक्षक प्रशिक्षणों में शिक्षकों को अक्सर 'रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट' लिखने के लिए कहा जाता है। लाज़मी भी है, यदि हम शिक्षार्थियों में समीक्षात्मक चिन्तन का विकास चाहते हैं, तो अलबत्ता शिक्षकों को उनके शिक्षण-अनुभवों को भी समीक्षात्मक नज़रिए से देखना होगा। मगर यदि महज़ 'क्या हुआ - क्या नहीं हुआ' से लदी जानकारियाँ रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट नहीं हैं, तो भला यह क्या बला है? माधव के ऐंग गाँव की चेंग कथाएँ ऐसे उदाहरणों से भरी हैं जो सीधे-सटीक शब्दों में शिक्षकों को रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट पर रिफ्लेक्ट करने को मजबूर करें।

37

शैक्षणिक संदर्भ

अंक-92 (मूल अंक-149), नवम्बर-दिसम्बर 2023

इस अंक में

05 | सिकल सेल एनीमिया
अंजु दास मानिकपुरी

11 | हम क्यों कहते हैं पृथ्वी सूर्य के चक्कर लगाती है: भाग 3
उमा सुधीर

22 | डेनिस सनिवन, टोपोलॉजी और बेहतर गणित शिक्षण...
अजय शर्मा

31 | मैं टेलीफोन हूँ
हरिशंकर परसाई

37 | ऐंग गाँव की चेंग कथाएँ: भाग 1
माधव केलकर

47 | बालनाटक लिखते हुए...!
उपासना चौबे

55 | किताब-कॉपी वाली परीक्षा
कालू राम शर्मा

68 | वापसी: भाग 2 (विज्ञान कथा)
सतीश बलराम अग्निहोत्री

85 | समुद्र में चक्रवात क्यों बनते हैं?
सवालीराम

हमारे आगामी प्रकाशन

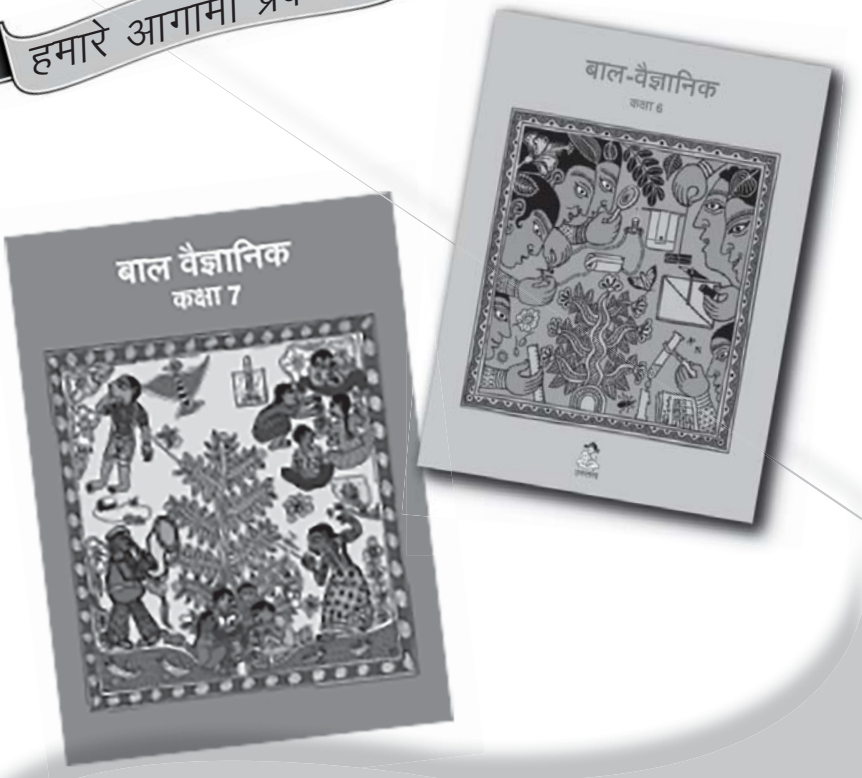

क्या कभी विज्ञान को रटकर नहीं, करके देखा है? *बाल वैज्ञानिक* कक्षा 6 और 7 होविशिका (होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम) से निकली विज्ञान को सीखने और समझने की वैकल्पिक किताबें हैं जो न सिर्फ देश में बल्कि विदेश में भी सराही गई हैं।

अवलोकन और प्रयोगों पर आधारित ये किताबें उन सभी बच्चों और शिक्षकों के लिए उपयोगी हैं जो विज्ञान को वैज्ञानिक तरीके से समझना चाहते हैं..

एकलव्य

अपनी प्रति बुक कराने के लिए सम्पर्क करें...

फोनः **+91 755 297 7770-71-72;** ईमेलः **pitara@eklavya.in**
www.eklavya.in | www.eklavyapitara.in

सिकल सेल एनीमिया

अंजु दास मानिकपुरी

संदर्भ अंक-146 में प्रकाशित लेख *सिकल सेल एनीमिया: एक आणविक रोग* को तीन सवालों से शुरू किया गया था-

1. सिकल सेल एनीमिया क्या और क्यों होता है?
2. क्या यह कोई संक्रमण है या किसी रसायन के कम या ज़्यादा होने से होता है? क्या यह संक्रामक बीमारी है?
3. सिकल सेल एनीमिया का निदान और इलाज कैसे होता है?

पहले भाग में हमने ऊपर के तीन सवालों में से दो सवालों पर चर्चा की थी लेकिन तीसरे सवाल पर बातचीत नहीं हो पाई थी। लेख का यह दूसरा भाग तीसरे सवाल पर ही केन्द्रित है। पिछले लेख के अन्त में सिकल सेल एनीमिया के सन्दर्भ में तीन प्रमुख बिन्दुओं का उल्लेख किया गया था। निदान और इलाज की तरफ जाने से पहले एक बार फिर से उनका संक्षिप्त में दोहराव कर लेते हैं-

- हीमोग्लोबिन-एस के अणु जब ऑक्सीजन रहित (डीऑक्सी-हीमोग्लोबिन-एस) होते हैं तो उनमें आपस में जुड़कर बहुलक बनाने की प्रवृत्ति होती है। बहुलक बनने की वजह से इनकी ऑक्सीजन वहन क्षमता कम हो जाती है।
- हीमोग्लोबिन-एस के ये बहुलक

चित्र-1: *सामान्य व सिकल सेल एनीमिया को दर्शाती रक्त वाहिकाओं का स्कीमैटिक चित्र। सिकल लाल रक्त कोशिकाएँ अधिक कठोर, चिपचिपी और आसानी-से बढ़ने वाली होती हैं। वे छोटी रक्त वाहिकाओं को अवरुद्ध कर सकती हैं।*

तन्तुनुमा होते हैं जिसके कारण वह कोशिका सख्त हो जाती है, चिपचिपी हो जाती है और हँसिए का आकार ग्रहण कर लेती है। इसके अलावा सख्त हो जाने की वजह से इन कोशिकाओं की बाहरी झिल्ली पर काफी दबाव पड़ता है और वे फट जाती हैं। इसी कारण से सिकल कोशिका की आयु कम होती है। जहाँ सामान्य लाल रक्त कोशिकाओं की आयु लगभग 120 दिन होती है, वहीं सिकल रक्त कोशिकाएँ मात्र 10-12 दिन जीवित रह पाती हैं। शरीर इतनी तेज़ी-से हीमोग्लोबिन और लाल रक्त कोशिकाओं का निर्माण नहीं कर पाता जिसकी वजह से खून में लाल रक्त कोशिकाओं की कमी हो जाती है।

- चूँकि ये कोशिकाएँ सख्त होती हैं, ये अक्सर रक्त वाहिनियों में फँस जाती हैं और रक्त प्रवाह में बाधा आती है। यह संकट की वजह बन जाती है। अचानक कुछ अंगों तक रक्त नहीं पहुँच पाता और ऑक्सीजन की कमी हो जाती है। साथ ही, पोषक पदार्थों का भी अभाव होने लगता है।

उपरोक्त तीनों बिन्दु हीमोग्लोबिन, लाल रक्त कोशिका और अन्ततः रक्त से सम्बन्धित हैं।

सिकल सेल एनीमिया की जाँच

सिकल सेल एनीमिया प्राणघातक हो सकता है, किन्तु समय रहते इसके बारे में पता चल जाने से उपचार सम्भव है। आइए, कुछ तरीकों के बारे में जानें जिससे इस बीमारी की जाँच की जा सकती है।

प्रारम्भिक स्तर पर तो चिकित्सक केवल रक्त की स्लाइड बनाकर रक्त की कोशिकाओं के संख्यात्मक और आकार आदि के बारे में अध्ययन की सलाह देता है। इस जाँच में किसी तरह की बिगड़ी हुई लाल रक्त कोशिका पाई जाने पर, या लाल रक्त कोशिका की संख्या के अत्यधिक कम होने का पता चलने पर या हीमोग्लोबिन के कम होने पर आगे की जाँच करने की सलाह दी जाती है।

प्रसव-पूर्व जाँच करने के लिए गर्भावस्था के 8 से 10 सप्ताह में एम्नियोटिक द्रव (बढ़ते भ्रूण के आसपास की थैली में द्रव) या आंवल (प्लेसेंटा) से लिए गए ऊतक को लिया जाता है और यह देखा जाता है कि कहीं इसमें सिकल सेल के जीन्स तो नहीं हैं।

बच्चे के जन्म के तुरन्त बाद अर्थात् नवजात शिशु की जाँच के लिए उसकी एड़ी से रक्त की बूँदों को एक विशेष प्रकार के कागज़ पर एकत्र किया जाता है। इस रक्त में उपस्थित हीमोग्लोबिन का प्रयोगशाला में परीक्षण किया जाता है। नवजात की जाँच से यह भी पता चलता है कि बच्चा सिकल सेल ग्रसित है अथवा

चित्र-2: सिकल सेल परीक्षण एक सरल रक्त परीक्षण है जिसका उपयोग यह जानने के लिए किया जाता है कि आपको सिकल सेल रोग या सिकल सेल के लक्षण हैं या नहीं।

वह मात्र वाहक है। जब किसी बच्चे को सिकल सेल रोग होता है, तो उसके भावी भाई-बहनों के सिकल सेल रोगग्रस्त होने या वाहक होने की सम्भावना अधिक होती है।

इस तरह से सिकल सेल के होने या न होने का पता लगाया जा सकता है। आजकल अस्पतालों में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि कहीं गर्भवती माँ में सिकल सेल तो मौजूद नहीं हैं।

उपचार के कुछ तरीके

जाँच में अगर सिकल सेल के जीन्स उपस्थित दिखते हैं तो उपचार के लिए भी कुछ तरीके हैं जिनमें मुख्यत: बेहतर प्रबन्धन शामिल है। प्रबन्धन के तहत दर्द को कम करने के उपाय, ज़्यादा-से-ज़्यादा आराम, लक्षणों की सतत निगरानी और चिकित्सक की देखरेख में रहना शामिल है। नई रक्त कोशिकाएँ बनती रहें, इसके लिए फॉलिक ऐसिड भी दिया जाता है। सिकल सेल एनीमिया ग्रसित मरीज़ों को बहुत सारा पानी पीने और बहुत तेज़ गर्मी या ठण्ड से बचने की सलाह दी जाती है। और नियमित व्यायाम तो मददगार होता ही है।

इलाज में मुख्यतः तीन तरीके अपनाए जाते हैं – दवाइयों से, रक्त चढ़ाना और स्टेम कोशिका प्रत्यारोपण (transplantation) तथा आनुवंशिक इलाज। आइए, संक्षेप में इन तीनों तरीकों को समझने की कोशिश करते हैं।

दवाइयों से

वोक्सेलॉटर (Voxelotor) वयस्कों और 12 साल एवं उससे अधिक उम्र के बच्चों में सिकल सेल रोग का इलाज करती है। यह दवा लाल रक्त कोशिकाओं को सिकल आकार बनाने और एक-साथ बँधने से रोकती है।

Crizanlizumab-TMCA दवाई सिकल सेल ग्रसित वयस्कों को इंजेक्शन द्वारा दी जाती है। यह रक्त कोशिकाओं को रक्त वाहिका की दीवारों से चिपकने से रोकने में मदद करती है।

हाइड्रोक्सीयूरिया 9 से 18 महीने के बच्चों में दर्द को कम करती है।

साथ ही, बच्चों में सिकल सेल एनीमिया के प्रभाव को कम करने के लिए पेनिसिलिन (ताकि न्यूमोनिया जैसी बीमारी न हो जाए) तथा नियमित टीकाकरण की सलाह दी जाती है।

गौरतलब है कि ये दवाइयाँ मुख्य रूप से सिकल सेल दिक्कत के लक्षणों को मन्द ही करती हैं, रोग को समाप्त नहीं करतीं। इस मायने में ये वास्तव में इलाज नहीं हैं।

रक्त और अस्थि मज्जा प्रत्यारोपण

रक्त और अस्थि मज्जा प्रत्यारोपण वर्तमान में सिकल सेल रोग का एकमात्र इलाज है। यह प्रत्यारोपण लगभग 85% बच्चों में सफल होते हैं। लेकिन प्रत्यारोपण के लिए ज़रूरी है कि मरीज़ तथा दानदाता का ह्यूमन ल्यूकोसाइट एंटीजन (एचएलए) मैच हो। हालाँकि, प्रत्यारोपण की सफलता दर काफी अच्छी है लेकिन इसमें अभी भी जोखिम हैं। कभी-कभी प्रत्यारोपित कोशिकाएँ प्राप्तकर्ता के अंगों पर हमला करती हैं। स्टेम कोशिका प्रत्यारोपण की भी मदद ली जाती है जिसमें सगे भाई-बहन की अस्थि मज्जा का प्रत्यारोपण किया जाता है।

स्ट्रोक रोकने के लिए खून भी चढ़ाया जाता है। इसके लिए दानदाता के खून से केवल लाल रक्त कोशिकाओं को अलग करके चढ़ाया जाता है पर इसमें यह ध्यान रखना भी ज़रूरी है कि खून में लौह का स्तर ज़्यादा न हो जाए, क्योंकि इससे हृदय पर खतरा बना रहता है।

जेनेटिक थेरेपी

जेनेटिक उपचार का उद्देश्य नए डीएनए को जोड़कर या मौजूदा डीएनए को बदलकर इलाज करना है। इसमें या तो सिकल जीन को हटा दिया जाता है या एक नया जीन जोड़ दिया जाता है।

जेनेटिक उपचार किसी व्यक्ति के स्वयं के हेमटोपोएटिक (रक्त निर्माण करने वाली) स्टेम सेल को संशोधित करता है। यह उन लोगों के लिए एक इलाज प्रदान कर सकता है जिन्हें सिकल सेल रोग है और उनके पास मैचिंग दाता नहीं है। संशोधित स्टेम सेल को रक्त में इंजेक्ट किया जा

सकता है; उससे कोशिकाएँ रक्तप्रवाह के ज़रिए अस्थि मज्जा तक पहुँच जाती हैं।

जीन में बदलाव करने वाली तकनीक अभी बेहद नई है। कुछ वर्ष पहले तक यह समझा जाता था कि हम मानव जीन में बदलाव नहीं कर सकते हैं, लेकिन जैसे-जैसे अध्ययन आगे बढ़ा तो पता चला कि मानव जीनोम में बदलाव करना सम्भव है। अब हम डीएनए के अनुक्रम को आसानी-से बदल सकते हैं और जीन को संशोधित भी कर सकते हैं। वैज्ञानिकों ने इस तकनीक को क्रिस्पर (CRISPR) नाम दिया।

क्रिस्पर तकनीक की मदद से किसी जीन को हटाकर, उसकी जगह नया जीन जोड़ा जा सकता है। हाल ही में अमेरिका के खाद्य व औषधि प्रशासन (एफडीए) ने इसे मंज़ूरी दे दी है। वैसे एक व्यक्ति के उपचार की लागत ही शायद आपको बीमार कर दे - करीब 35 लाख डॉलर।

यह प्रक्रिया अभी बेहद नई है और आने वाले समय में पता चलेगा कि ये तरीका कितना कारगर है। पर यह बेहद ज़रूरी है कि ऐसी तकनीकी का उपयोग समाज की बेहतरी के लिए किया जाए।

उपचार का एक पहलू यह भी

इन सब उपचारों के साथ एक अत्यन्त अहम पहलू सामाजिक है - यह सुनिश्चित करना कि सिकल सेल एनीमिया से ग्रसित व्यक्ति अपने

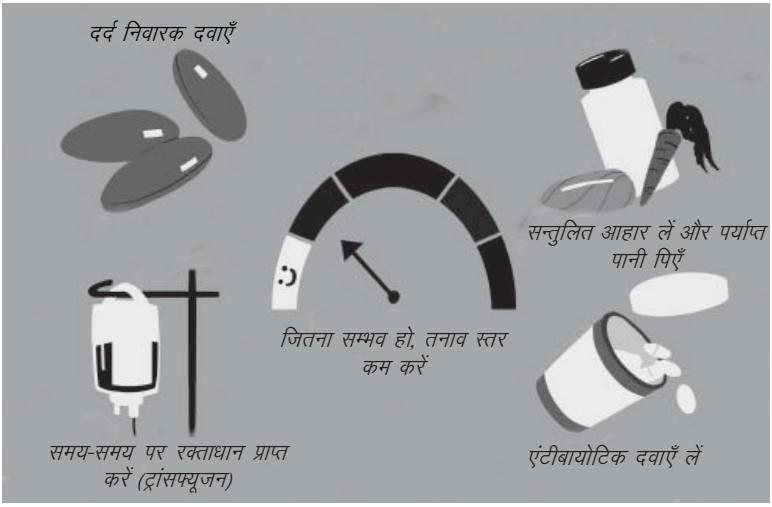

चित्र-3: *सिकल सेल एनीमिया रोगियों के लिए विभिन्न तरह की देखभाल।*

आपको अलग-थलग न समझे। उनकी लगातार काउंसलिंग की जाना चाहिए ताकि मानसिक तनाव को कम किया जा सके। सिकल सेल एनीमिया में दर्द बहुत ज़्यादा होता है इसलिए ज़रूरी है कि उन्हें शारीरिक दर्द के साथ-साथ मानसिक तकलीफ न दी जाए। अध्ययन इस ओर इशारा करते हैं कि सिकल सेल एनीमिया के मरीज़ों के परिवारों में काफी तनाव उत्पन्न होता है। सामान्य तौर पर, इस बीमारी से ग्रसित लोगों के प्रति समुदाय की नकारात्मक धारणा देखने को मिलती है। ऐसे में बेहद ज़रूरी है कि सिकल सेल एनीमिया के सामाजिक, भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक पहलुओं की उपेक्षा न की जाए।

सिकल सेल एनीमिया पर यह लेख लिखते हुए मेरे सामने कई चेहरे तैरने लगते हैं जिन्हें मैंने करीब से देखा है। उनमें से कई लोग झाड़-फूँक करवाते हुए अपने जीवन से अलविदा हो गए। मैंने कुछ परिवार ऐसे भी देखे जहाँ घर के कई सदस्य 2-3 साल के अन्दर एक के बाद एक खत्म हो गए। बहुत सारी माँओं को अपने बच्चों के लिए चिन्तित होते देखा है, चाहे बात शादी की हो या काम के सिलसिले में अपने से दूर भेजने की हो।

पाठकों से मेरा आग्रह है कि हम कम-से-कम अपने आसपास सिकल सेल एनीमिया सम्बन्धी सही जानकारी लोगों तक पहुँचाएँ। औरों के अनुभव सुनकर, अपने अनुभव औरों के सामने रखकर, और अनुभवों की समानता देखकर सिकल सेल एनीमिया से पीड़ित लोगों का सही मार्गदर्शन और काउंसलिंग करें।

गौरतलब यह भी है कि बीमारी चाहे कोई भी हो, छुपाने से तो ठीक नहीं होगी। इसलिए क्यों न हम इससे पीड़ित बच्चों और बड़ों को उचित मार्गदर्शन दें ताकि वे नीम-हकीम के चक्कर में न पड़कर, सही इलाज कराएँ और समय पर इलाज कराएँ। यह भी ध्यान रखें कि ऐसे स्कूली बच्चों के साथ हमारा बर्ताव अत्यधिक सहयोग भरा हो ताकि वे भी बाकी बच्चों की तरह सीखने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें।

अंजू दास मानिकपुरी: स्नातक व स्नातकोत्तर की कक्षाओं को असिस्टेंट प्रोफेसर के रूप में छह वर्षों तक रसायन शास्त्र पढ़ाया। अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, छत्तीसगढ़ में विज्ञान की स्रोत व्यक्ति के तौर पर काम किया। वर्तमान में पिरामल फाउंडेशन, भोपाल में बतौर सीनियर प्रोग्राम मेनेजर कार्य कर रही हैं। बच्चों के साथ विज्ञान की अवधारणाओं पर बात करने में रुचि।

सम्पादन: सुशील जोशी।

आकाशीय पिण्डों की गति की व्याख्या

हम क्यों कहते हैं कि पृथ्वी सूर्य के चक्कर लगाती है?

उमा सुधीर

लेखों की इस शृंखला के पिछले दो लेखों में हमने विभिन्न आकाशीय पिण्डों की आभासी गति पर ध्यान दिया था, जो पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूर्णन के कारण दिखती है। हमने यह भी देखा था कि यदि चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा हो, तो पृथ्वी से क्या दिखेगा। हमें काफी कम उम्र में यह भी सिखाया जाता है कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है और उसे एक चक्कर लगाने में एक साल (या 365 और ¼ दिन) लगता है। इस लेख में पहले तो हम यह खोजबीन करेंगे कि यदि, हमारे सारे सहज-ज्ञान के विपरीत, पृथ्वी सूर्य के आसपास चक्कर लगाती है तो आकाश में हम क्या देखने की अपेक्षा कर सकते हैं। जैसा हमने पृथ्वी के इर्द-गिर्द चन्द्रमा की परिक्रमा के सन्दर्भ में किया था, हम यह अन्दाज़ लगाने की कोशिश करेंगे कि हमारे अवलोकन परिक्रमा की दिशा के बारे में क्या बताते हैं। इसके बाद हम रात में आकाश के व्यवस्थित अवलोकन करेंगे ताकि अपनी 'भविष्यवाणियों' की पुष्टि कर सकें। इस लेख के अन्तिम हिस्से में हम कुछ ऐसी गड़बड़ियों की चर्चा करेंगे जो तब सुलझ गईं जब हमने भू-केन्द्रित मॉडल को छोड़कर सूर्य-केन्द्रित मॉडल को अपना लिया। इसके अन्तर्गत आकाश के आवारा नागरिकों – यानी ग्रहों की गतियों को देखना शामिल होगा। इसके लिए हम सूर्य-केन्द्रित मॉडल की मान्यताओं को स्वीकार कर लेंगे और इसका सम्बन्ध अपने अवलोकनों से बैठाने की कोशिश करेंगे – ऐसे अवलोकन जो लगभग दो महीनों की अवधि में किए जा सकें। इसके बाद हम चर्चा करेंगे कि सिर्फ अधिक सरल होने के कारण ही क्यों सूर्य-केन्द्रित मॉडल सौर मण्डल का एक बेहतर प्रस्तुतीकरण हो जाता है।

सूर्य सौर मण्डल का 'स्टार' है

सौर मण्डल का सूर्य-केन्द्रित मॉडल कहता है कि सारे ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं (हम शुरुआत पृथ्वी की गति से करेंगे), और सौर मण्डल अनगिनत तारों (और निहारिकाओं) से घिरा है, जो बहुत दूर हैं (सबसे पास वाला तारा चार प्रकाश वर्ष की दूरी पर है)। हालाँकि, विभिन्न तारे और निहारिकाएँ भी गति कर रहे हैं लेकिन उनकी सापेक्ष स्थितियों में

परिवर्तन को एक जीवन काल में नहीं देखा जा सकता; लिहाज़ा, इस लेख के सन्दर्भ में हम मान सकते हैं कि वे एक-दूसरे के सापेक्ष और सौर मण्डल के सापेक्ष स्थिर हैं। यही कारण है कि हमें बार-बार वही तारामण्डल दिखते हैं और तारामण्डल के विभिन्न तारों की आपस में सापेक्ष दूरियाँ भी बरकरार रहती हैं।[1]

लेकिन जब अँधेरा होता है तो आकाश के एक निश्चित हिस्से में क्या सालभर वही तारामण्डल नज़र आते हैं? यदि आप गर्मियों की रातों में खुले में सोएँ तो क्या आपको वही तारामण्डल नज़र आते हैं जो जाड़ों की रात में दिखे थे? और यदि पृथ्वी तारों (तारामण्डलों), जो एक-दूसरे के सापेक्ष स्थिर हैं, से घिरे एक सौर मण्डल का हिस्सा है तो हम क्या देखने की उम्मीद करते हैं? यहाँ दिया गया चित्र (चित्र-1) देखिए जिसमें पृथ्वी को सूर्य की परिक्रमा की अपनी कक्षा में चार अलग-अलग बिन्दुओं पर दिखाया गया है।

अभी के लिए मान लीजिए कि हम पृथ्वी को ध्रुव तारे की दिशा से देख रहे हैं। सूर्य के इर्द-गिर्द पृथ्वी की कक्षा पूरी तरह वृत्ताकार नहीं है। यह एक दीर्घवृत्त है। अलबत्ता, अगले लेख में हम देखेंगे कि वर्तुलता से यह विचलन इतना कम है कि इसे अनदेखा किया जा सकता है। चित्र को सरल रखने के लिए चन्द्रमा व अन्य ग्रह नहीं दर्शाए गए हैं। ज़ाहिर है, प्रत्येक स्थिति में पृथ्वी के उस हिस्से में रात होगी जो सूर्य के सम्मुख नहीं है और शेष हिस्से में दिन होगा। यकीनन, तारे बहुत-बहुत दूर हैं लेकिन सुविधा के लिए उन्हें पृथ्वी की कक्षा के नज़दीक दर्शाया गया है। जब पृथ्वी स्थिति 1 पर होती है, तब तारा F रात में नज़र आएगा लेकिन तारा B? चूँकि तारा B इस स्थिति में आकाश में सूर्य के पीछे है, इसलिए वह दिखेगा नहीं। इसी प्रकार से जब पृथ्वी अपनी कक्षा में स्थिति 3 पर होगी, तब तारा B तो दिखेगा लेकिन तारा F नहीं।

जब पृथ्वी स्थिति 4 पर होगी, तो आकाश कैसा दिखेगा? Z चिन्हित स्थान पर खड़े किसी व्यक्ति के लिए, समय लगभग मध्य-रात्रि का होगा (सूर्य की स्थिति देखिए, व्यक्ति को मध्यान्ह का सूर्य सिर के ऐन ऊपर देखने में अभी 12 घण्टे शेष हैं)। पिछले लेख से याद कीजिए कि यदि हम पृथ्वी को ध्रुव तारे की दिशा से देखें, तो वह अपनी धुरी पर घड़ी की

---

[1] *ज़ाहिर है, यह एक भ्रम है। ज़रूरी नहीं है कि किसी भी तारामण्डल के तारे वास्तव में एक-दूसरे के ज़्यादा नज़दीक हों, बनिस्बत अन्य तारों के। उनकी आभासी निकटता सिर्फ इसलिए है क्योंकि हम तक उनका प्रकाश अन्तरिक्ष के एक ही क्षेत्र से आता है। वास्तव में, हो सकता है कि वे एक-दूसरे से हज़ारों प्रकाश वर्ष दूर हों। और तो और, हमारे मनपसन्द तारामण्डलों के कुछ तारे तो वास्तव में अत्यन्त दूरस्थ निहारिकाएँ हैं!*

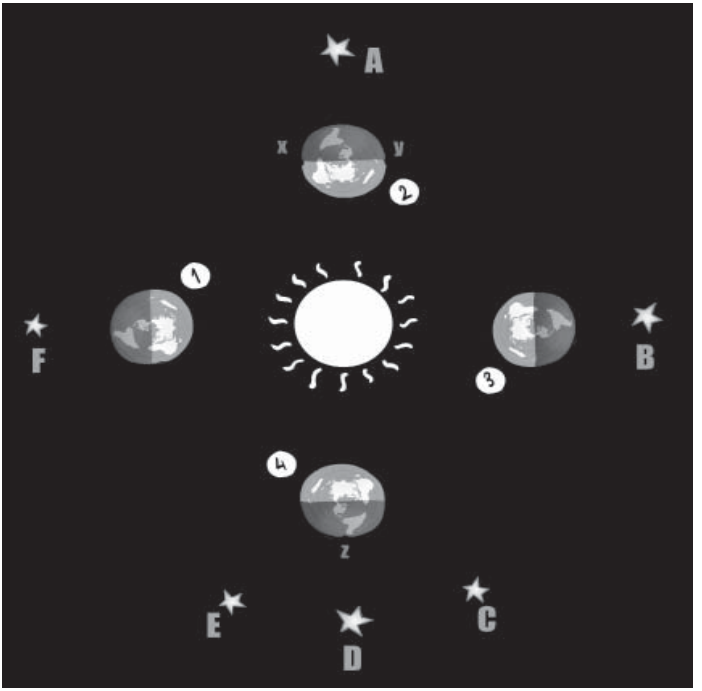

चित्र: मयूश्री

चित्र-1: *पृथ्वी सूर्य के चारों ओर अपनी कक्षा में चार स्थितियों में। प्रत्येक स्थिति से कौन-से तारे दिखाई देंगे? प्रत्येक तारा या नक्षत्र कब उदय या अस्त होगा?*

विपरीत दिशा में घूमती दिखती है। और बिन्दु Z पर मध्य-रात्रि को खड़े इस व्यक्ति के लिए, तारा D सिर के ऊपर होगा जबकि तारा E पश्चिमी आकाश में होगा और जल्दी ही अस्त हो जाएगा जबकि तारा C पूर्वी आकाश में दिखेगा।

और जब पृथ्वी स्थिति 2 में होगी तब तारा E व C के दिखने के बारे में क्या कहेंगे? एक बार फिर याद कीजिए कि पृथ्वी को ध्रुव तारे की दिशा से देखें, तो वह एंटी-क्लॉकवाइस दिशा में घूमती दिखती है और 24 घण्टे में एक घूर्णन पूरा कर लेती है। तो यदि हम दो लोगों की कल्पना करें, जो पृथ्वी की स्थिति 2 में X तथा Y बिन्दु पर खड़े हैं, तो उनमें से एक लगभग सूर्यास्त के समय के नज़दीक है जबकि दूसरा सूर्योदय के निकट है। मुझे यकीन है कि आपको यह ताड़ने में बिलकुल भी कठिनाई नहीं होगी कि X और Y में

से किसके लिए सुबह जागने का समय हो चुका है। आगे बढ़ने से पहले इस मामले को सुलझा लीजिए ताकि आप बगैर भ्रमित हुए पढ़ते रह सकें।

मैं उम्मीद करती हूँ कि आपने समझ लिया है कि तारा E सूर्योदय से ठीक पहले पूर्वी आकाश में होगा और तारा C सूर्यास्त से ठीक बाद पश्चिमी आकाश में नज़र आएगा (और निश्चित रूप से, ये दोनों व्यक्ति तारा D को नहीं देख पाएँगे क्योंकि वह तो सूरज के एकदम पीछे है और सूरज की चकाचौंध में ओझल रहेगा)। लेकिन जब पृथ्वी सूर्य के इर्द-गिर्द अपनी परिक्रमा-कक्षा में आगे बढ़ेगी तो कुछ दिनों बाद हालात कैसे बदलेंगे? यदि पृथ्वी स्थिति 2 से स्थिति 1 की ओर बढ़ती है, तो तारा C सूर्य के पीछे होगा और तारा D सुबह-सुबह के आकाश में पूर्व में नज़र आने लगेगा; और तारा E और भी पहले उदय हो चुका होगा और सूर्योदय से काफी पहले पूर्वी आकाश में नज़र आएगा। अलबत्ता, यदि पृथ्वी स्थिति 2 से स्थिति 3 की तरफ गति करती है तो तारा D सूर्यास्त के तुरन्त बाद पश्चिमी आकाश में नज़र आएगा जबकि तारा C सूर्यास्त के समय पश्चिमी आकाश में काफी ऊपर होगा। यानी तारा D पहले अस्त होगा और उसके एकाध घण्टे बाद तारा C अस्त होगा। और इस मामले में तारा E होगा जो सूर्य के पीछे रहेगा और आकाश में नज़र नहीं आएगा।

ज़ाहिर है, पृथ्वी की परिक्रमा की दिशा तय करने के लिए हमें यह देखना होगा कि रात के आकाश में किस तरह परिवर्तन होते हैं। इसी के आधार पर तय हो सकेगा कि पृथ्वी स्थिति 2 से स्थिति 1 की ओर जाती है या स्थिति 3 की ओर। पृथ्वी को ध्रुव तारे की ओर से ही देखते हुए, अगर वह स्थिति 2 से स्थिति 1 की ओर जाएगी तो इसे एंटी-क्लॉकवाइस कहेंगे और यदि वह स्थिति 2 से स्थिति 3 की ओर जाएगी तो क्लॉकवाइस कहेंगे। वास्तविक दिशा क्या है और इसे पता करने के लिए हमें कितने दिनों तक आकाश को निहारना होगा?

जैसी कवायद हमने पृथ्वी के इर्द-गिर्द चन्द्रमा की गति की दिशा का पता लगाने के लिए की थी, वैसी ही कवायद यहाँ भी करनी होगी। याद करें कि सूर्य के आसपास पृथ्वी की कक्षा को एक वृत्त माना जा सकता है और पृथ्वी को इस वृत्त को पूरा करने में 365 दिन का समय लगता है। चूँकी एक वृत्त 360 डिग्री का होता है, इसलिए यह माना जा सकता है कि पृथ्वी रोज़ाना करीब 1 डिग्री चलती है। लिहाज़ा, यदि हम रोज़ाना रात में आकाश को एक निश्चित समय पर देखेंगे, तो तारों की स्थिति हर रात एक डिग्री बदल चुकी होगी। अलबत्ता, यह परिवर्तन इतना कम है कि इसे

बगैर किसी उपकरण की मदद से खुली आँखों से पकड़ पाना सम्भव नहीं है। लेकिन यदि हम देखें कि किसी दिन एक निश्चित समय पर, पूरा अन्धकार हो जाने के बाद, कोई तारा या तारामण्डल पूर्वी या पश्चिमी क्षितिज से कितना ऊपर है तो हम देख सकेंगे कि 15 दिनों में यह कितना सरकता है। यह परिवर्तन हर 15 दिन में लगभग 15° का होगा जिसे आसानी-से देखा जा सकेगा। ऐसा एक-डेढ़ महीने तक किया जा सकता है। (इस अभ्यास के मकसद से ऐसे तारे देखना बहुत उपयोगी नहीं होगा जो उत्तर या दक्षिण की ओर हैं क्योंकि आपने देखा ही होगा कि ध्रुव तारा अपनी जगह से कदापि हटता नहीं दिखता है।)[2]

उस चित्र पर लौटें जिसकी चर्चा हम पहले कर रहे थे; यदि पृथ्वी सूर्य के आसपास क्लॉकवाइस दिशा में घूम रही हो, तो ऐसा कोई तारा जो किसी दिन पश्चिमी क्षितिज के नज़दीक है, वह 15 दिन बाद क्षितिज से कुछ ऊपर दिखेगा। दूसरी ओर, यदि पृथ्वी एंटी-क्लॉकवाइस दिशा में घूम रही हो, तो 15 दिन बाद पश्चिमी क्षितिज के नज़दीक का कोई तारा सूर्य के साथ अस्त हो जाएगा और पूरा अन्धकार होने के बाद वह दिखाई नहीं देगा। अर्थात्, यदि आप डेढ़-दो महीने तक अवलोकन करें तो पश्चिमी क्षितिज के नज़दीक का कोई भी तारा, अन्धकार होने के बाद, पहले से और पहले अस्त होगा। इसी प्रकार से, यदि आप अगले दो माह तक अवलोकन करें, उस तारे का क्या होगा जो किसी दिन अँधेरा होने के तत्काल बाद उदय हो रहा हो? क्या सूर्यास्त के समय पर क्षितिज से अधिक ऊपर होगा या क्या वह देर से उदय होगा? मैं उम्मीद करती हूँ कि *संदर्भ* में इस शृंखला का अगला लेख प्रकाशित होने तक आपने सारे ज़रूरी अवलोकन करके सूर्य के आसपास पृथ्वी की परिक्रमा की दिशा का अन्दाज़ लगा लिया होगा।

और आकाश में हमारे निकटस्थ हमसफर

जैसा कि पहले कहा गया था, तारे (यानी, सूरज को छोड़कर) बहुत-बहुत दूर हैं। सबसे नज़दीकी तारा चार प्रकाश वर्ष से ज़्यादा दूर है। लेकिन सौर मण्डल में आठ ग्रह हैं और उनके उपग्रह हैं। इसके अलावा कई अन्य छोटे-मोटे पिण्ड सूर्य का चक्कर लगाते रहते हैं। पृथ्वी पर खड़े-खड़े हम इन आठ ग्रहों में से पाँच को नंगी आँखों से देख सकते हैं। और ये पाँच ग्रह सारी प्राचीन सभ्यताओं को ज्ञात रहे हैं। अन्य दो ग्रह – यूरेनस और नेप्चून – को दूरबीन की मदद से ही देखा जा

[2] *ध्रुव तारे की आभासी अटलता सिर्फ एक रात की नहीं, बल्कि पूरे वर्ष की बात है। इसकी व्याख्या अगले लेख में की जाएगी।*

चित्र: मधुश्री

__चित्र-2:__ तारे विभिन्न नक्षत्रों में अपनी स्थिति बनाए रखते प्रतीत होते हैं, लेकिन उनकी निकटता केवल आभासी होती है और वे गतिशील भी होते हैं, हालाँकि यह परिवर्तन हमारे जीवनकाल में नहीं देखा जा सकता है।

सकता है। इसके अलावा, बृहस्पति के चन्द्रमा (उपग्रहों) और शनि की वलय को भी तभी देखा जा सका था, जब हमने दूरबीन को उनकी ओर घुमाया! आकाश निहारने वालों को ग्रहों ने सदा से - जब से लोगों ने रात के आकाश में प्रकाशित बिन्दुओं पर ध्यान देना शुरू किया - आकर्षित किया है। ग्रह दो कारणों से अलग लगते हैं – (i) सारे तारे टिमटिमाते हैं जबकि ग्रह प्रकाश के स्थिर स्रोत होते हैं, चाहे शुक्र की तरह चमकदार या शनि की तरह मद्धिम; और (ii) कि वे टिमटिमाते तारों की स्थिर पृष्ठभूमि के सामने बेतरतीबी से तफरीह करते नज़र आते हैं, कभी-कभी तो उल्टी दिशा में चलते दिखते हैं।[3] अर्थात् एक-दूसरे के सापेक्ष तारों की स्थिति नहीं बदलती जबकि ग्रह एक से दूसरे तारामण्डल में भटकते नज़र आते हैं। उससे भी ज़्यादा विचित्र बात है कि प्रत्येक ग्रह मनमौजी होता है और बाकी ग्रह कुछ भी करते रहें, वह अपनी चाल से चलता रहता है।

कई सदियों तक सारे आकाशीय पिण्डों के सावधानीपूर्वक किए गए अवलोकनों से लोगों ने प्रत्येक ग्रह की गति में कुछ पैटर्न खोज निकाले

[3] *ग्रहों की इस उल्टी या 'पश्चगामी' चाल की व्याख्या भू-केन्द्रित मॉडल द्वारा करना अत्यन्त कठिन था। लेख में आगे इस पर और चर्चा करेंगे।*

और यह देखा गया कि शुक्र और बुध कभी भी पूरी रात नहीं दिखते। वास्तव में, बुध तो एक-एक बार में कुछ दिनों के लिए सूर्यास्त के फौरन बाद या सूर्योदय से फौरन पहले अत्यन्त थोड़े समय के लिए दिखता है। अधिकांश दिन तो वह देखा ही नहीं जा सकता। सूर्य और चन्द्रमा के बाद शुक्र आकाश में सबसे चमकीला पिण्ड है। इसे या तो सूर्यास्त के बाद पश्चिमी आकाश में लगभग दो घण्टे के लिए देखा जा सकता है (जब इसे गलती से सांध्य तारा कह दिया जाता है) या पूर्वी आकाश में सूर्योदय से पहले लगभग दो घण्टे के लिए देखा जा सकता है (जब इसे भोर का तारा नाम दे दिया जाता है!)।

मंगल, बृहस्पति और शनि को साल की अलग-अलग अवधियों में पूरी रात में देखा जा सकता है। लेकिन ये अलग-अलग चाल से गति करते हैं और अधिकांश समय तारों की पृष्ठभूमि में एक दिशा में चलते नज़र आते हैं और फिर थोड़ी अवधि के लिए उल्टी दिशा में चलने लगते हैं। बाद में ये एक बार फिर सीधे चलने लगते हैं। यह भविष्यवाणी करने के लिए काफी जटिल गणनाएँ करनी होती थीं कि इनमें से प्रत्येक कब अपनी गति की दिशा बदल लेगा। इस गति की व्याख्या करना भी काफी जटिल गणनाओं की माँग करता था (चित्र-3)।

सूर्य केन्द्रित मॉडल प्रस्तावित करते हुए कॉपरनिकस युरोप के शक्तिशाली चर्च के विरोध में गए थे। चर्च का फतवा था कि पृथ्वी ईश्वर द्वारा रचित ब्रह्माण्ड के केन्द्र में है। तो उन्होंने सुरक्षित रास्ता अपनाते हुए यह कहा कि यह मॉडल मात्र इस उद्देश्य से प्रस्तावित किया गया है कि तारों की, और खासकर ग्रहों की, वर्तमान स्थिति (तथा भावी स्थितियाँ) पता करने हेतु ज़रूरी गणनाओं को सरल बनाया जा सके।

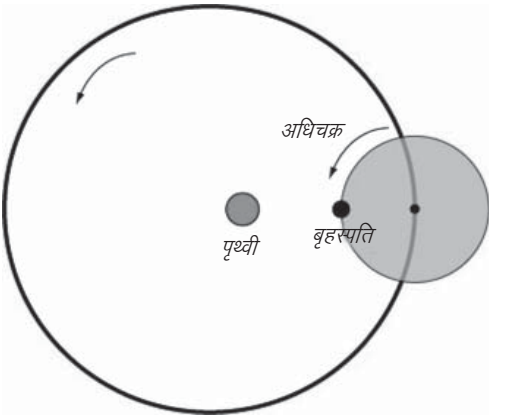

चित्र-3: *भूकेन्द्रित प्रणाली में बृहस्पति की पश्चगामी चाल की व्याख्या। ऐसा माना जाता था कि बृहस्पति सूर्य, चन्द्रमा, अन्य ग्रहों एवं तारों सहित अन्य सभी खगोलीय पिण्डों के साथ पृथ्वी की परिक्रमा करता है। यहाँ सरलता के लिए केवल बृहस्पति को दिखाया गया है - पृथ्वी के चारों ओर अपनी कक्षा में, बड़े वृत्त में घूमने के बाद, यह छोटे वृत्त पर जाता है जिसका केन्द्र बड़े वृत्त की कक्षा पर होता है। और जब यह वृत्त के उस भाग पर होता है जो बड़े वृत्त के अन्दर है, तब बृहस्पति तारों की पृष्ठभूमि के विरुद्ध पीछे की ओर जाता हुआ प्रतीत होगा।*

कॉपरनिकस के इस मॉडल में पृथ्वी समेत सारे ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं। इसमें बुध और शुक्र की कक्षाएँ पृथ्वी की तुलना में छोटी हैं और वे सूर्य के अधिक नज़दीक हैं जबकि मंगल, बृहस्पति और शनि की कक्षाएँ पृथ्वी की कक्षा के बाहर हैं। अपनी पाठ्यपुस्तकों और अन्य सामग्रियों में हम इस व्यवस्था के चित्र देखने के इतने आदी हैं कि यह देख पाना आसान नहीं होता कि यह विचार कितना क्रान्तिकारी था। इसका सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा शायद इस बात की व्याख्या रही होगी कि क्यों शुक्र और बुध कभी भी मध्यरात्रि को नहीं दिखते – क्योंकि वे पृथ्वी के मुकाबले सूर्य के अधिक नज़दीक हैं, इसलिए वे सूर्योदय से बहुत पहले और सूर्यास्त के बहुत देर बाद उदय या अस्त नहीं होंगे; ऐसा कभी नहीं होगा कि पृथ्वी सूर्य और इन ग्रहों के बीच आ जाए ताकि वे देर रात दिख सकें।

सूर्य-केन्द्रित मॉडल की दूसरी बढ़िया बात थी कि इसमें मंगल, बृहस्पति और शनि की पश्च (retrograde) गति की व्याख्या कहीं अधिक सरलता से हो जाती थी। इससे पहले कि हम उस व्याख्या की चर्चा करें, थोड़ा अलग हटकर देखें कि यह पूरा मामला हमें वैज्ञानिक व्याख्या के बारे में क्या बताता है। वैज्ञानिक सिद्धान्त मूलत: वे कहानियाँ होती हैं जो हम किसी परिघटना की व्याख्या के लिए बनाते हैं। किसी भी परिघटना की व्याख्या के लिए कई कहानियाँ हो सकती हैं। वैज्ञानिक सिद्धान्त एक तो इस मायने में विशिष्ट होते हैं कि वे यह भविष्यवाणी कर सकते हैं कि यदि वह सिद्धान्त सही है तो भविष्य में क्या होगा। उनकी दूसरी विशेषता यह होती है कि उनमें न्यूनतम होने की प्रवृत्ति होती है। इसका मतलब यह है कि अनगिनत व्याख्याएँ हों, तो वैज्ञानिक उस व्याख्या को वरीयता देते हैं जो सरलतम मान्यताओं पर आधारित हों और कई अन्य परिघटनाओं पर भी लागू होती हों। कहने का मतलब यह है कि यदि हमारे पास हरेक परिघटना के लिए एक-एक कहानी हो, और कोई ऐसी कहानी प्रस्तुत कर दे जो मात्र एक सर्वव्यापी सिद्धान्त की मदद से उन सारी परिघटनाओं की व्याख्या कर सके तो वैज्ञानिक हमेशा ऐसा इकलौता सिद्धान्त ज़्यादा पसन्द करते हैं (शायद इसलिए कि वे इतने अलग-अलग सिद्धान्त सीखने को लेकर आलसी होते हैं!!)।

आइए, सूर्य-केन्द्रित मॉडल की मदद से तारों की पृष्ठभूमि के रूबरू मंगल की गति की व्याख्या करने की कोशिश करते हैं। हम जानते हैं कि पृथ्वी को सूर्य की परिक्रमा करने में एक वर्ष लगता है। चूँकि मंगल कहीं अधिक दूरी पर है[4], उसे सूर्य की एक परिक्रमा करने में दो साल लगते हैं। तो कल्पना करने की कोशिश कीजिए

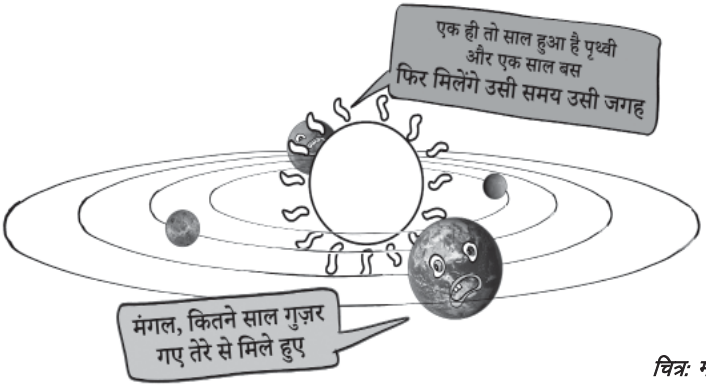

चित्र: मधुश्री

चित्र-4: *चूँकि ग्रहों की परिक्रमा करने की अलग-अलग अवधि होती है, हम उन्हें तारों की अपरिवर्तित पृष्ठभूमि के विरुद्ध चलते हुए देखते हैं। यदि हम बृहस्पति को एक वर्ष अक्टूबर में वृश्चिक राशि में देखते हैं, तो अगले अक्टूबर में वह किसी अन्य राशि में होगा और लगभग 12 वर्षों के बाद ही वृश्चिक राशि में वापस आएगा। इसी तरह, यदि हम आज मंगल को एक नक्षत्र में देखते हैं, तो हम उसे दो साल बाद ही उसी स्थान पर देखेंगे।*

कि अगर हम कुछ समयावधि के लिए मंगल का अवलोकन करें तो हमें क्या दिखेगा। यदि आज मंगल मध्यरात्रि के समय सिर के ठीक ऊपर हो (अर्थात् यदि हम उसकी स्थिति को किसी तारामण्डल के सापेक्ष चिन्हित कर दें), तो जब एक वर्ष बाद पृथ्वी अपनी कक्षा के उसी स्थान पर होगी (अर्थात् जब मध्यरात्रि के समय वही तारे ठीक सिर के ऊपर होंगे), तब तक मंगल ने अपनी आधी कक्षा ही पार की होगी और वह सूर्य के पीछे होगा और इस बिन्दु पर वह हमें नज़र नहीं आएगा। लेकिन यदि हम दो साल बाद उसे खोजेंगे, तो वह आकाश में उसी स्थान पर होगा (चित्र-4)।

तो, इनमें से प्रत्येक ग्रह को सूर्य की एक परिक्रमा पूरी करने में लगने वाले समय के आधार पर, उन्हें तारों की पृष्ठभूमि में एक बार फिर उसी स्थान पर दिखाई देने में उतना ही अधिक समय लगेगा। इतना ही नहीं, चूँकि सारे ग्रह सूर्य की परिक्रमा अपनी-अपनी चाल से करते हैं, इसलिए प्रत्येक अन्दरूनी ग्रह अपनी परिक्रमा के दौरान कभी-न-कभी बाहरी ग्रह के आगे निकल जाएगा। पृथ्वी पर विराजमान हम लोग जब मंगल के आगे निकलते हैं तो वस्तुत:

[4] *और वह अपेक्षाकृत धीमी गति से भी चलता है; गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त इस बात की व्याख्या करता है कि क्यों सूर्य के नज़दीक के ग्रह दूरस्थ ग्रहों की अपेक्षा तेज़ी-से चलते हैं। बुध एक फर्राटा धावक है जबकि नेप्चून घोंघा चाल से आगे बढ़ता है।*

हम मंगल को तारों की स्थिर पृष्ठभूमि के सापेक्ष देख रहे होते हैं और ऐसा लगता है कि मंगल की स्थिति रोज़-ब-रोज़ इस तरह बदलती है कि वह उल्टी दिशा में चलता प्रतीत होता है। इसी को पश्च गति या उल्टी चाल कहते हैं। मंगल, बृहस्पति और शनि की स्थिति को तारों की पृष्ठभूमि के सापेक्ष देखिए और पता लगाइए कि उनकी स्थितियाँ समय के साथ कैसे बदलती हैं। बृहस्पति को सूर्य की परिक्रमा करने में 12 साल का समय लगता है, तो तारों की पृष्ठभूमि के सापेक्ष उसकी चाल मंगल की अपेक्षा कहीं ज़्यादा धीमी होगी, और शनि तो और भी धीमे चलता दिखेगा क्योंकि उसे सूर्य का एक चक्कर लगाने में 29 साल लगते हैं।

राशिचक्र

जब हम रात के आकाश में चाँद और अन्य ग्रहों की गति का अवलोकन करते हैं, तो पाते हैं कि ये कभी भी बहुत अधिक उत्तर या दक्षिण में नज़र नहीं आते। दरअसल, ये सब पूर्व से पश्चिम में फैले एक निहायत संकरे रास्ते में दिखते हैं। दूसरे शब्दों में, ये रात में दिखाई देने वाले सारे तारों की पृष्ठभूमि के एक संकरे पट्टे में चलते नज़र आते हैं। इस अवलोकन की व्याख्या इस आधार पर हो जाती है कि सारे ग्रह सूर्य की परिक्रमा एक ही तल में करते हैं और चन्द्रमा की कक्षा भी इस तल से बहुत अलग नहीं है।[5] इस मार्ग पर उपस्थित तारों की पहचान बहुत पहले कर ली गई थी

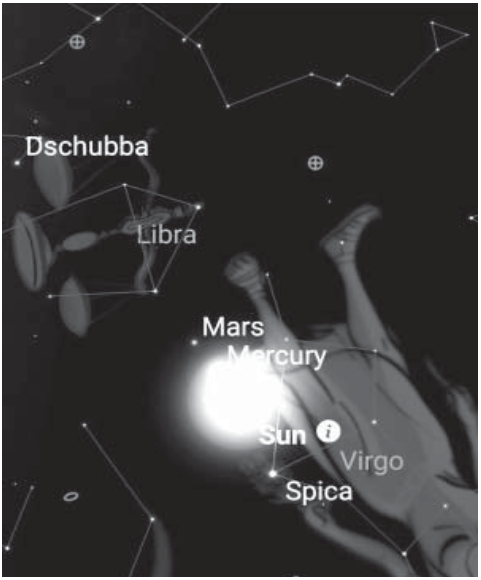

फोटो - संकेत

चित्र-5: सूर्य राशिचक्र की पृष्ठभूमि पर चलता है और यहाँ तुला व कन्या राशि के बीच (कन्या तारामण्डल के करीब) दिखाई दे रहा है। जब सूर्य कन्या राशि में होगा, तो यह तारामण्डल दिखाई नहीं देगा क्योंकि वह सूर्य के साथ उदय और अस्त होगा और रात के आकाश में मौजूद नहीं होगा। (यह फोटो sky safari *एप के द्वारा लिया गया है।)*

[5] *पृथ्वी की कक्षा के सापेक्ष चन्द्रमा की कक्षा के तल की ज़्यादा विस्तृत चर्चा अन्तिम लेख के उस हिस्से में करेंगे जहाँ ग्रहणों की व्याख्या की जाएगी।*

और उन्हें तारामण्डलों के रूप में समूहीकृत भी कर लिया गया था। इन्हें विभिन्न राशियाँ कहा गया। अर्थात् सूर्य, चन्द्रमा और विभिन्न ग्रह इस राशिचक्र में गति करते हैं। ज़ाहिर है, जब किसी राशि से सम्बन्धित तारामण्डल सूर्य के पीछे होता है, तो वह दिखाई नहीं देता और तब कहा जाता है कि सूर्य उस राशि में है। वर्ष को बारह राशियों के आधार पर 12 महीनों में बाँटा गया है। इसी प्रकार से, जब हम तारों की पृष्ठभूमि के सापेक्ष प्रतिदिन चन्द्रमा की स्थिति को देखें तो चन्द्रमा को हर रोज़ एक तारामण्डल की ज़रूरत होगी। भारतीय खगोल शास्त्र में ये 27 तारामण्डल नक्षत्र कहलाते हैं। स्थितियों के सटीक निर्धारण के लिए परिष्कृत उपकरण न होने की वजह से रात के आकाश को विभिन्न राशियों और नक्षत्रों में विभाजित करने से चाँद और अन्य ग्रहों की बदलती स्थितियों के मानचित्रण में मदद मिली थी। इसके आधार पर उनकी गतियों को समझा गया और यह भविष्यवाणि की जा सकी कि निश्चित समय के बाद वे कहाँ होंगे।

अर्थात्, यह सूर्य-केन्द्रित मॉडल, जिसमें सूर्य केन्द्र में स्थिर है और पृथ्वी तथा अन्य ग्रह अलग-अलग दूरियों पर और अलग-अलग परिक्रमा अवधियों से उसके चक्कर लगा रहे हैं, इस बात की व्याख्या कर सकता है कि हमें साल के अलग-अलग समयों पर आकाश में क्या दिखता है और क्या नहीं दिखता।

उमा सुधीर: *एकलव्य* के साथ जुड़ी हैं। विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में काम कर रही हैं।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: सुशील जोशी: *एकलव्य* द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

सभी चित्र: मधुश्री: फ्रीलांस चित्रकार व परफॉर्मर। बच्चों व वयस्कों, दोनों के लिए कहानियाँ कहने की विभिन्न कथात्मक, चित्रात्मक व अभिनय की शैलियों में रुचि।

डेनिस सलिवन, टोपोलॉजी और बेहतर गणित शिक्षण की दरकार

अजय शर्मा

कुछ वक्त पहले मेरे एक पुराने मित्र ने मुझे एक गणितज्ञ का इंटरव्यू ईमेल किया और कहा, "इसे पढ़ो, यह तुम्हें रोचक लगेगा।" यह गणितज्ञ हैं डेनिस सलिवन (Dennis Sullivan)। मित्र का कहा कैसे टालता, तो मैंने तुरन्त यह साक्षात्कार पढ़ डाला। बड़ा ही रोचक लगा। फिर मैंने डेनिस सलिवन के बारे में और जानकारी हासिल की, उनके काम और जीवन को समझने का प्रयास किया। यह खोजबीन भी काफी फायदेमन्द रही। उनका जीवन और उपलब्धियाँ रोचक और प्रेरणादायक तो हैं ही, पर जो बात इस लेख को लिखने का खास सबब बनी वो यह कि मेरा मानना है कि डेनिस सलिवन की जीवनी और उनका गणित को समझने का नज़रिया शिक्षा से जुड़े लोगों, खास तौर पर गणित के शिक्षकों के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

वैज्ञानिकों के बारे में तो पत्रिकाओं और अखबारों में अक्सर छपता रहता है, और उनका जनसम्मान एक आम बात है। पर गणितज्ञों को यह दर्जा विरला ही नसीब होता है। इसलिए मुमकिन है कि अधिकांश पाठक डेनिस सलिवन के नाम और काम से नावाकिफ हों। डेनिस सलिवन गणित की शाखा 'टोपोलॉजी' में दुनिया के प्रमुखतम गणितज्ञों में से एक हैं। उन्हें 2022 में गणित के सबसे सम्माननीय पुरस्कार – आबेल पुरस्कार (Abel Prize) – से नवाज़ा गया। नोबेल पुरस्कार के समकक्ष माना जाने वाला यह सालाना पुरस्कार गणितज्ञों को गणित के क्षेत्र में उनके असाधारण और महत्वपूर्ण योगदान के लिए दिया जाता है। डेनिस सलिवन को यह सर्वोच्च सम्मान गणित की शाखा टोपोलॉजी के बीजीय, ज्यामितीय और गतिकीय पहलुओं पर उनके अभूतपूर्व योगदान के मद्देनज़र दिया गया।

क्या है टोपोलॉजी?

टोपोलॉजी (या, संस्थितिविज्ञान) ज्यामिति से विकसित हुई गणित की एक शाखा है। इसमें हम ज्यामितीय आकृतियों/वस्तुओं के उन गुणों को समझने की कोशिश करते हैं जो वस्तुओं में लाई गई निरन्तर विकृतियों तथा रूपान्तरणों, जैसे खींचने, मरोड़ने आदि के बावजूद सरंक्षित

रहते हैं। मसलन, टोपोलॉजी के सन्दर्भ में सोडा पीने में इस्तेमाल की जाने वाली स्ट्रॉ को कलाइयों में पहनी जाने वाली चूड़ी के समतुल्य माना जा सकता है। यह इसलिए कि किसी स्ट्रॉ को बिना तोड़े या काटे किसी तरह से पिचकाकर और खींच-तानकर एक चूड़ी जैसा बनाया जा सकता है। और जब हम ऐसा करते हैं तो उसमें छिद्रों की संख्या, जो कि 'एक' है, नहीं बदलती। इसी तरह से गेंद तथा ढोलक को भी टोपोलॉजी के नज़रिए से समरूप माना जा सकता है। वहीं दूसरी ओर, अगर आप किसी टोपोलॉजिस्ट से पूछें कि पानी के गिलास और चाय के कप में क्या फर्क है, तो चौंकिएगा नहीं अगर वे कहें कि ये दोनों चीज़ें भिन्न इसलिए हैं क्योंकि टोपोलॉजी के सन्दर्भ में पानी के गिलास में कोई छिद्र नहीं होता, पर चाय के कप में उसके हैंडल की वजह से एक छिद्र तो होता ही है (चित्र-1)।

हालाँकि, टोपोलॉजी की अवधारणाओं की जड़ें 18वीं सदी के गणितज्ञों के काम में देखी जा सकती हैं, जैसे कि स्विट्ज़रलैंड के गणितज्ञ लियोनहार्ड ऑइलर (Leonhard Euler) के काम में, मगर टोपोलॉजी को आज हम जिस प्रकार जानते हैं, उस रूप में वह 20वीं शताब्दी की शुरुआत में फ्रांसीसी गणितज्ञ ऑनरी प्वांकारे

चित्र-1: *टोपोलॉजी के सन्दर्भ में, एक कॉफी-मग और एक डोनट (या, मेदु वड़ा, आप जैसा भी नाश्ता करना चाहें) समतुल्य हैं। चित्र में देखा जा सकता है कि कैसे किसी कॉफी-मग के आकार को किसी तरह खींच-तान और मोड़कर एक डोनट के आकार में तब्दील किया गया है। गौरतलब है कि दोनों आकारों में छिद्रों की संख्या 'एक' ही है। हालाँकि, टोपोलॉजी यह नहीं बताती कि अब उस मेदु वड़े को खाया जाए या उसमें कॉफी डालकर पिया जाए।*

(Henri Poincaré) व अन्य गणितज्ञों के योगदान से उभरी। कहा जाता है कि ऑनरी प्वांकारे ने लियोनहार्ड ऑइलर के काम की महत्ता को पहचाना और इस विषय से बाकी गणितज्ञों को अवगत करवाया। मगर गणित की दुनिया में टोपोलॉजी सही मायनों में एक प्रतिष्ठित मुकाम पर तब ही पहुँच सकी जब 20वीं सदी में समुच्चय सिद्धान्त के विकास की बदौलत और बीजगणितीय तकनीकों के ज़रिए टोपोलॉजी की ज्यामितीय समस्याओं का समाधान हो पाया। तब से लेकर आज तक डेनिस सलिवन जैसे टोपोलॉजी के विशेषज्ञों के महत्वपूर्ण योगदानों के चलते यह विषय गणित की एक प्रमुख शाखा के रूप में विकसित हुआ है।

राजनीति विज्ञान से लेकर भौतिकी तक, तमाम विषयों में टोपोलॉजी के सिद्धान्त और तकनीकें विषयगत गुत्थियों को सुलझाने में काफी बहुमूल्य साबित हुई हैं। मसलन, मिशेल फेंग और मेसन पोर्टर (Michelle Feng and Mason Porter) ने दिखाया है कि टोपोलॉजी की सतत अनुरूपता (परसिस्टेंट होमोलॉजी) की विधि के ज़रिए किस तरह 2016 के सयुंक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति चुनाव में मतदाताओं के वोटिंग पैटर्न का ज़्यादा सटीक विश्लेषण प्रस्तुत किया जा सकता है• (बॉक्स-1)।

भौतिकी में टोपोलॉजी की मदद से एक नए किस्म के पदार्थों की खोज हुई है जिन्हें अब 'टोपोलॉजिकल पदार्थों' के नाम से

बॉक्स 1

राजनीतिशास्त्र में टोपोलॉजी का इस्तेमाल खास तौर पर मतदान से जुड़े व्यवहार और डेटा के विश्लेषण के लिए किया जाता है। इससे मतदाताओं, मतदान, राजनीतिक दलों और प्रत्याशियों के अलग-अलग रुझानों और उन पर प्रभाव डालते अलग-अलग घटकों की पहचान और विश्लेषण करने में मदद मिल सकती है। उदाहरण के लिए, शोधकर्ता टोपोलॉजी के मॉडलों के उपयोग से चुनाव-क्षेत्रों के गुणों, जैसे उनका आकार, जनसांख्यिकी आदि, का अध्ययन करके यह पता लगाने की कोशिश कर सकते हैं कि चुनावी प्रक्रिया कितनी निष्पक्ष रही, विशेषकर जेरीमैंडरिंग का पता लगाने के लिए।

जेरीमैंडरिंग एक किस्म का राजनीतिक षड्यंत्र होता है जिसमें किसी विशेष राजनीतिक दल के प्रति पक्षपात के चलते चुनाव-क्षेत्रों की सीमाओं को मनमाने ढंग से निर्धारित किया जाता है, ताकि उस क्षेत्र में उस राजनीतिक दल का बहुमत स्थापित किया जा सके।

• https://arxiv.org/pdf/1902.05911.pdf

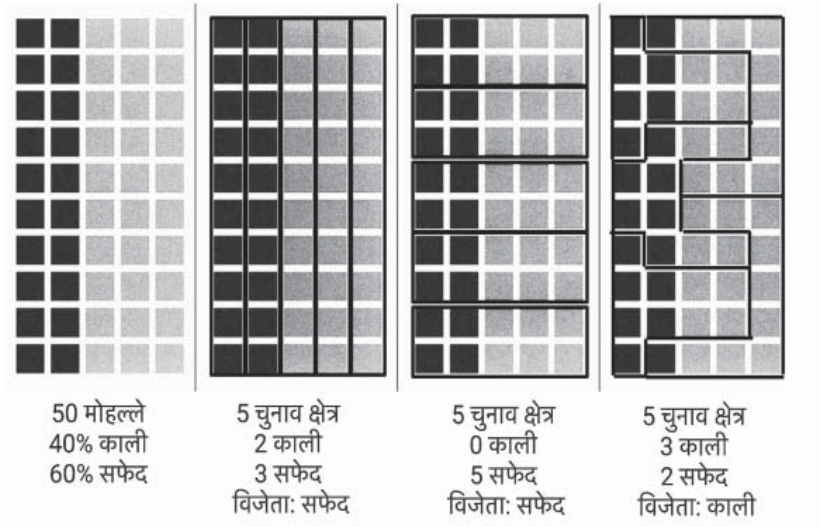

चित्र-2: *जेरीमैंडरिंग: मान लीजिए, किसी शहर में 50 मोहल्ले हैं, जिनमें से 60% मोहल्ले 'सफेद' पार्टी के समर्थक हैं और 40% मोहल्ले 'काली' पार्टी के (चित्र की पहली आकृति)। अब, चुनाव के लिए उस शहर में 5 चुनाव-क्षेत्र बनाए जाने हैं। चित्र की दूसरी, तीसरी और चौथी आकृति में देखा जा सकता है कि किस तरह चुनाव-क्षेत्रों की सीमाएँ बदलने से चुनाव के नतीजे बदल सकते हैं।*

जाना जाता है। इन पदार्थों में कई नए किस्म के गुण देखे गए हैं जो न सिर्फ बेहद हैरतअंगेज़ प्रतीत होते हैं, बल्कि भविष्य में उनके कई बहुमूल्य उपयोग भी सम्भावित हैं (बॉक्स 2)। भौतिक-शास्त्री उम्मीद लगाए बैठे हैं कि निकट भविष्य में टोपोलॉजिकल पदार्थों की बदौलत वे नई, उन्नत किस्म की कम्प्यूटर चिप्स और क्वांटम कम्प्यूटर्स का विकास करने के साथ-साथ नए मूलभूत कणों और भौतिकी के नियमों को खोज पाएँगे।

सलिवन के योगदान

बतौर गणितज्ञ, सलिवन के योगदानों को दो भागों में बाँटा जा सकता है। पहला, टोपोलॉजी के क्षेत्र में तो सलिवन का योगदान अभूतपूर्व रहा ही है। जैसा कि पहले ज़िक्र किया जा चुका है, टोपोलॉजी गणितज्ञों के लिए अहम तब साबित हुआ जब बीसवीं सदी के शुरुआती दशकों में वे समझ पाए कि टोपोलॉजी के सवालों को बीजगणित के ज़रिए कैसे सुलझाया जा सकता है। पर इस महत्वपूर्ण खोज के बाद एक लम्बे

बॉक्स 2

टोपोलॉजिकल पदार्थों के कई दिलचस्प और खास गुण होते हैं। जैसे –

1. अनूठी विद्युत चालकता: इन पदार्थों के भीतरी भाग के गुणों और सतह के किनारों के गुणों के बीच फर्क होता है। विशेषकर, विद्युत चालकता के सन्दर्भ में। जहाँ इन पदार्थों का भीतरी भाग विद्युतरोधी होता है, वहीं इनकी सतह के किनारे विद्युत चालक होते हैं। अतः इलेक्ट्रॉन इसके भीतरी भाग में बिखरने की बजाय इसके किनारों के ज़रिए आसानी-से बह सकते हैं, जिससे यह पदार्थ विद्युत करंट के बहाव के लिए बहुत कुशल पदार्थ साबित होता है।

2. अशुद्धियों के विरुद्ध मज़बूती: टोपोलॉजिकल पदार्थों में अशुद्धियों और दोषों को मिलाने पर भी इनके किनारों के खास गुण बरकरार रहते हैं। जबकि अन्य पदार्थों में अशुद्धियों की उपस्थिति से उनके इलेक्ट्रॉनिक व्यवहार में गड़बड़ी हो सकती है। अतः इस सन्दर्भ में ये पदार्थ काफी मज़बूत और स्थिर होते हैं।

3. प्रकाश हाईवे: जिस तरह इलेक्ट्रॉन टोपोलॉजिकल पदार्थों के किनारों के ज़रिए बेहद कम प्रतिरोध के साथ बह सकते हैं, वैसे ही फोटॉन के लिए डिज़ाइन किए गए टोपोलॉजिकल पदार्थों के किनारों के ज़रिए, प्रकाश बेहद कम बिखराव और ऊर्जा-क्षति के गुज़र सकता है। इस तरह यह फोटॉन के लिए किसी सुपरफास्ट हाईवे की तरह हुआ। इसका उपयोग ऐसे कार्यकुशल फोटॉनिक उपकरणों को बनाने में किया जा सकता है जो प्रकाश को कम-से-कम बिखराव और ऊर्जा-क्षति के साथ ढो सकें।

समय तक, एक विषय-अनुशासन के तौर पर, टोपोलॉजी के विकास की दर थोड़ी सुस्त ही रही क्योंकि गणितज्ञ एक सीमित दायरे के भीतर कुछ खास किस्म के टोपोलॉजिकल स्पेस में ही बीजगणितीय तकनीकों का इस्तेमाल करने का माद्दा रखते थे। पर पिछली सदी के सातवें दशक में इन हालातों में आमूलचूल परिवर्तन आए, जब सलिवन ने गणितज्ञों के समक्ष एक नया क्रान्तिकारी मॉडल - सलिवन मॉडल - प्रस्तुत किया। इस मॉडल की मदद से कई किस्म की टोपोलॉजिकल स्पेस वाली समस्याओं को बीजगणितीय तकनीकों के ज़रिए हल किया जा सकता है।

योगदानों का दूसरा भाग तब सामने आया जब अस्सी के दशक में सलिवन ने अपने गणितीय जौहर का प्रदर्शन कर सबको पुनः अचम्भित कर दिया। इस बार उन्होंने गणित के गतिकीय तंत्र (डायनैमिकल सिस्टम्स) शोधक्षेत्र में मौलिक योगदान दिया। गतिकीय तंत्र मोटे तौर पर वे तंत्र होते हैं जो समय के साथ बदलते और विकसित होते जाते हैं, जैसे ग्रहों

की कक्षाओं का परस्पर सम्बन्धित तंत्र, ट्रैफिक के बहाव, स्टॉक मार्केट के उतार-चढ़ाव के तंत्र आदि। 1980 के दशक में, इन तंत्रों पर काम करने वाले गणितज्ञों द्वारा पाया गया कि कई प्रकार के गतिकीय तंत्रों में एक खास किस्म की संख्याएँ, जिन्हें फाइगेनबॉम स्थिरांक (Feigenbaum constants) कहा जाता है, उभरती नज़र आती हैं। पर वे इसका कारण नहीं खोज पा रहे थे। सलिवन ने अपने गणितीय काम के ज़रिए दिखाया कि ऐसा क्यों होता है।

आज भी, जब उनकी उम्र अस्सी के पार हो चुकी है, सलिवन उसी शिद्दत से गणितीय शोध में मशगूल हैं। वर्तमान में उनका शोध तरल पदार्थों के उथल-पुथल पूर्ण बहाव, जैसे बहते पानी की एक धारा, को समझने में उपयोगी गणितीय मॉडल के विकास की ओर केन्द्रित है। ऐसा जीवन बहुतेरी प्रेरणाएँ प्रस्तुत करता है। पर चूँकि अपने कार्यक्षेत्र और रुचियों के चलते मेरी सोच मुख्यतः शिक्षा और शिक्षकों तक ही सीमित है, बाकी के लेख में पाठकों के समक्ष मैं गणित शिक्षा सम्बन्धी कुछ विचार रखना चाहता हूँ।

जीवन-डगर के मोड़

कई बार देखा गया है कि संयोगवश घटे कुछ प्रसंग, जो घटते वक्त तो काफी मामूली से जान पड़ते हैं, दरअसल हमारे जीवन को एक नई दिशा में धकेलने का काम कर देते हैं। कुछ ऐसा ही सलिवन के साथ उनके कॉलेज के दिनों में हुआ, जो आगे चलकर गणित की दुनिया के लिए बहुत फायदेमन्द साबित हुआ। अमेरिका की उत्तरी सीमा से लगे शहर पोर्ट ह्यूरॉन में 1941 में जन्मे डेनिस सलिवन, हालाँकि अपने बचपन से एक प्रतिभाशाली छात्र ज़रूर थे, पर गणित में उनका कोई खास रुझान नहीं था। स्कूली शिक्षा के उपरान्त भी, राइस विश्वविद्यालय में दाखिला उन्होंने केमिकल इंजीनियरिंग पढ़ने के लिए लिया था। कॉलेज के पहले साल तक तो उन्हें यह इल्म भी नहीं था कि गणित को एक पेशे के रूप में अपनाया जा सकता है। फिर कॉलेज के दूसरे साल में, एक दिन गणित की कक्षा में प्रोफेसर ने ब्लैकबोर्ड पर दो विभिन्न आकृतियों के स्विमिंग पूल के चित्र बनाकर सिद्ध कर दिया कि गणितीय नज़रिए से दोनों आकृतियाँ समतुल्य हैं। इस भिन्नता में भी गणित के ज़रिए समानता खोज पाना डेनिस को बेहद हैरतअंगेज़ लगा। उस पल से वे गणित की उस शक्ति के कायल हो गए जिसकी बदौलत हम प्रकृति के बाहरी आवरण के पीछे छिपे गहरे सत्यों को टटोल पाते हैं। बस फिर क्या था, तुरत-फुरत उन्होंने केमिकल इंजीनियरिंग छोड़कर गणित की राह पकड़ ली।

अब अटकलें लगाई जा सकती हैं

कि अगर किसी कारणवश उस दिन वे गणित की कक्षा में न बैठे होते या उस प्रोफेसर की कक्षा की बजाय किसी अन्य से गणित पढ़ रहे होते तो क्या टोपोलॉजी का विषय उस ऊँचे मुकाम पर पहुँच पाता जहाँ वह आज सलिवन के योगदान के चलते स्थापित है। पर मेरी नज़र में इस प्रसंग से उभरता सबसे ज़्यादा गौरतलब मुद्दा तो सीखने-सिखाने में शिक्षण-पद्धति की भूमिका ही है।

शिक्षाशास्त्रीय विषयवस्तु ज्ञान

इस बात से कतई इनकार नहीं किया जा सकता कि किसी कक्षा में कोई छात्र कितना सीख रहा है, यह तमाम स्थिर-अस्थिर परिस्थितियों पर निर्भर करता है, जैसे कि छात्र की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि आदि। पर जब किसी कक्षा में पढ़ाई जारी हो, तो शिक्षक जिस तरह से विषयवस्तु को छात्रों के समक्ष पेश करता है, यह काफी हद तक तय करता है कि छात्र उस विषयवस्तु से विमुख होंगे या अभिभूत। आम तौर पर समझा जाता है कि अच्छे शिक्षण के लिए विषय की गहरी समझ ही काफी है, और अगर शिक्षक को शिक्षाशास्त्र का भी ज्ञान है तो फिर बस, सोने पर सुहागा! पर दरअसल ऐसा नहीं है। अगर वास्तव में ऐसा होता तो हरेक अच्छा वैज्ञानिक एक अच्छा शिक्षक भी साबित होता।

ली शुलमैन व अन्य शिक्षाविदों के शोध हमें बताते हैं कि अच्छे व कुशल शिक्षण के लिए किसी शिक्षक का शिक्षाशास्त्रीय विषयवस्तु सम्बन्धी ज्ञान (पैडेगॉजिकल कॉण्टेंट नॉलेज, या पीसीके) बेहद महत्वपूर्ण होता है। यह शिक्षक के शिक्षाशास्त्रीय ज्ञान और विषयवस्तु-सम्बन्धी ज्ञान का समेकित रूप है, जिसे वह अपने शिक्षण अनुभवों के ज़रिए, इस समझ के साथ विकसित करता है कि किस श्रेष्ठ तरीके से उसके शिक्षाशास्त्रीय व विषयवस्तु-सम्बन्धी ज्ञान को छात्रों की अवधारणात्मक समझ के साथ जोड़ा जा सकता है। यह ज्ञान किसी शिक्षक को यह निर्णय लेने में मदद करता है कि किसी खास विषय को, किसी खास सन्दर्भ में, विद्यार्थियों के किसी खास समूह के समक्ष पेश करने का सबसे प्रभावशाली तरीका क्या होगा।

देखा गया है कि शिक्षकों का अविकसित पीसीके अक्सर छात्रों में उस विषयवस्तु को लेकर अरुचि का कारण बन जाता है। वहीं दूसरी ओर, अगर कोई शिक्षक सुविकसित पीसीके से लैस है तो वह न सिर्फ अपने छात्रों को अच्छी तरह से विषयवस्तु समझा पाता है, बल्कि उन्हें उस विषय से अभिभूत करके और अधिक सीखने के लिए प्रेरित करने में भी सक्षम हो पाता है। कुछ ऐसा ही, डेनिस सलिवन ने उस दिन गणित की कक्षा में महसूस किया होगा जब उनके गणित के प्रोफेसर ने उन्हें एक

उपयुक्त उदाहरण के ज़रिए टोपोलॉजी विषय से ऐसा मंत्रमुग्ध किया कि उन्होंने गणितीय शोध को ही अपना पेशा बनाने का निर्णय ले डाला।

एक खूबसूरत मंज़र

भारत में इस विषय पर शोध के अभाव में यह कहना तो मुश्किल है कि इस देश में गणित के शिक्षकों के शिक्षाशास्त्रीय विषयवस्तु सम्बन्धी ज्ञान का स्तर कैसा है। पर सरकारी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं की जर्जर हालत और केन्द्रीय व राज्य सरकारों के शिक्षक व्यावसायिक विकास के प्रति पराए व्यवहार के मद्देनज़र आशावान होना थोड़ा मुश्किल ही जान पड़ता है। कल्पना कीजिए कि अगर हमारा समाज गणित शिक्षक प्रशिक्षण में ऐसे सुधार लाने की ठान ले जिससे गणित शिक्षकों का शिक्षाशास्त्रीय विषयवस्तु सम्बन्धी ज्ञान विश्वस्तरीय हो जाए, तो हमारा मुल्क न जाने कितने डेनिस सलिवन जैसे गणितज्ञ पैदा करने लगेगा। ऐसे खूबसूरत मंज़र की कल्पना मात्र से ही मैं रोमांचित हो जाता हूँ।

डेनिस सलिवन का गणित के प्रति नज़रिया गणित की एक अन्य खासियत की ओर भी इशारा करता है, जिस पर अगर गणित शिक्षक प्रशिक्षण में ध्यान दिया जाए तो वह गणित शिक्षण के लिए काफी लाभकारी सिद्ध हो सकता है। हम अक्सर ऐसे लोगों को गणित में होशियार मान लेते हैं जो बहुत जल्दी गणना कर लेते हैं या फिर फटाफट गणित की समस्याओं का हल ढूँढ़ लेते हैं। पर डेनिस सलिवन का मानना है कि यह ठीक परिप्रेक्ष्य नहीं है। उनके हिसाब से, गणित दरअसल अपनी दुनिया को गहराई से समझने का एक नायाब तरीका है। यानी असली गणितज्ञ वह है जो गणित के ज़रिए उस अमूर्त, मूलभूत ढाँचे को परख पाए जिस पर प्रकृति टिकी हुई है। आइंस्टाइन का भी मानना था कि प्रकृति के मूलभूत सत्य गणित में ही साकार होते हैं। इसलिए प्रकृति को समझने में हमारा अनुभव भले ही कुछ हद तक मार्गदर्शन कर पाए, पर उसे पूर्ण रूप से समझने की कुंजी गणित के साथ ही निहित है। इस बात का सीधा राब्ता गणित शिक्षण से है। यह देखा गया है कि कई छात्र जल्द ही गणित में दिलचस्पी लेना छोड़ देते हैं। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि उनके समक्ष गणित को एक ऐसे रूखे विषय की तरह पेश किया जाता है जिसका उनकी दुनिया से कोई खास लेना-देना ही नहीं होता। नतीजतन, वे सोचने लगते हैं कि अगर केलकुलस का उनके अनुभवों से कोई सम्बन्ध ही नहीं है तो भला क्यों उससे माथा-पच्ची करें।

यानी अगर हम चाहते हैं कि हमारे छात्र गणित के प्रति उत्साहित रहें, तो शिक्षकों को चाहिए कि गणित को

अपने आसपास की दुनिया से लेकर ब्रह्माण्ड के दूरस्थ कोनों को समझने की कुंजी की तरह छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत करें। गणित के ज़रिए हम छात्रों को न सिर्फ भौतिक संसार को बेहतर समझने में मदद कर सकते हैं, बल्कि यह भी दिखा सकते हैं कि कैसे गणित के ज़रिए हमारे सामाजिक जीवन के तमाम पहलुओं को भी बखूबी टटोला जा सकता है। मसलन, इंटरनेट पर ऐसी कई पाठ-योजनाओं के उदाहरण मौजूद हैं जिनमें बच्चे गणित के ज़रिए समाज के गरीब-कमज़ोर तबकों के आर्थिक शोषण पर एक पैनी नज़र डाल पाते हैं। ज़ाहिर है, कई मुल्कों में ऐसा गणित शिक्षण भी हो रहा होगा। मुमकिन है कि भारतीय स्कूली शिक्षा की वर्तमान मरणासन्न हालत को देखते हुए कई लोगों को हमारी शालाओं में गणित शिक्षा की ऐसी परिकल्पना मुंगेरीलाल के हसीन सपनों के मानिन्द लगे। पर मैं कोई नई बात नहीं कर रहा हूँ। भारत में गणित शिक्षण को ऐसे मुकाम पर पहुँचाने के छुटपुट प्रयास कई दशकों से हो रहे हैं। डेनिस सलिवन की जीवनी और उनका गणित को समझने का नज़रिया हमें इन कोशिशों को और पुख्ता करने की प्रेरणा देता है।

अजय शर्मा: एथेंस, संयुक्त राज्य अमेरिका में यूनिवर्सिटी ऑफ जॉर्जिया के शैक्षणिक सिद्धान्त और अभ्यास विभाग (डिपार्टमेंट ऑफ एजुकेशनल थ्योरी एंड प्रैक्टिस) में प्रोफेसर के तौर पर कार्यरत हैं। उनका मौजूदा शोध शिक्षा पर नवउदारवाद के प्रभाव के सैद्धान्तिक तथा नृवंशविज्ञान सम्बन्धी अन्वेषण पर केन्द्रित है। 1990 के दशक में, एक फुल-टाइम अकादमिक बनने से पहले, वे होशंगाबाद, मध्य प्रदेश में होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के साथ काम करते थे।

डेनिस सलिवन

मैं टेलीफोन हूँ

हरिशंकर परसाई

मेरी राम-कहानी विचित्र है। 10 मार्च 1876 को बॉस्टन, यूएसए में मेरा जन्म हुआ था। एडिनबर्ग, स्कॉटलैंड के एक वैज्ञानिक ने मेरा आविष्कार किया। मेरे जन्म के बाद विज्ञान के आविष्कारों के इतिहास में एक नवीन अध्याय जुड़ गया। सारे संसार के लोगों का ध्यान एकदम से मेरी ओर केन्द्रित हो गया। मेरी उपयोगिता को दुनियाभर के लोगों ने समझा और आज मैं लगभग सभी दुकानों, दफ्तरों तथा अनेकानेक स्थानों में पाया जाता हूँ। मेरी सत्ता अत्यन्त व्यापक हो गई है। आज का युग मेरा ही युग है। मेरा जन्म तो अकेला हुआ था किन्तु मेरे अन्य रूपों की कल्पना भी मेरे जन्मदाता ने शायद उसी समय कर ली थी और उसका परिणाम यह हुआ कि आज हर जगह मैं ही मैं दिखलाई देता हूँ। आज तो मेरी संख्या अनगिनत है। मेरे जन्मदाता ने ही मेरा नाम 'टेलीफोन' रखा।

मेरे जन्मदाता एलेक्ज़ेंडर ग्राहम बेल का जन्म 3 मार्च 1847 को एडिनबर्ग में हुआ था। ग्राहम बेल के

पिता का नाम एलेक्ज़ेंडर मेलविल बेल था। वे ध्वनि-विज्ञान के पण्डित थे। ग्राहम बेल की प्रारम्भिक शिक्षा एडिनबर्ग रॉयल हाईस्कूल में हुई थी जिसके पश्चात् वे उसी शहर के विश्वविद्यालय में पढ़ने लगे। बाद में, वे यूनिवर्सिटी कॉलेज लन्दन में अध्ययन करने चले गए।

बचपन से आविष्कारक

ग्राहम बेल ने मेरा आविष्कार तो सन् 1876 में किया, किन्तु वे अपने बचपन से ही ध्वनि-विज्ञान के प्रति विशेष रुचि लेते थे। यंत्र विज्ञान के प्रति भी उनकी स्वाभाविक वृत्ति थी और उस रुचि के कारण ही वे तरह-तरह के आविष्कारक कार्य किया करते थे। बारह साल की उम्र में, एक बार ग्राहम बेल एडिनबर्ग स्कूल के पास एक मिल में अपने सहपाठियों के साथ गए। मिल मालिक ने ग्राहम बेल तथा उनके सहपाठियों को गेहूँ छानने का कार्य दिया। ग्राहम बेल को जब यह काम मिला तो वे उसे करने का नया तरीका खोजने लगे। उनके सभी साथी बड़े श्रम के साथ गेहूँ के दानों की धूल और छिलकों को हाथ से ही निकालने में लगे थे, किन्तु ग्राहम बेल ने तत्काल ही एक ब्रश बना लिया और बहुत जल्द गेहूँ को साफ कर मालिक को सौंप दिया। ग्राहम बेल के इस कारनामे को देखकर मिल मालिक स्तम्भित रह गया। उसने गेहूँ साफ करने का यह नया उपाय ग्राहम बेल से सीखा और पूरी मिल में उसी तरीके का प्रयोग किया जाने लगा। बाद में, कई मिलों में गेहूँ को साफ करने वाला यह यंत्र इस्तेमाल होने लगा।

बधिर शिक्षण

ध्वनि-विज्ञान और ध्वनि-यंत्रों का अध्ययन करते-करते मेरे आविष्कारक का स्वास्थ्य खराब हो गया। वे टीबी से जूझ रहे थे। उसके पिता को बहुत चिन्ता हुई और वे उसे लेकर कैनेडा चले गए। वहाँ एक वर्ष बाद, बॉस्टन में ग्राहम बेल ने बधिरों के लिए एक स्कूल खोला जिसमें शिक्षकों को प्रशिक्षण भी दिया जाता था। इस स्कूल में अनेक बधिर शिक्षण प्राप्त करने के लिए आते थे। कैनेडा के बहुत-से लड़के और लड़कियाँ, युवक और युवतियाँ भी उस शाला में प्रशिक्षण प्राप्त करते थे। उस शाला में प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए एक बधिर युवती भी आती थी, जिसका नाम मेबल हबर्ड था। ग्राहम बेल ने इस युवती से विवाह किया और उनकी श्रवणेन्द्रिय पर ही तरह-तरह के ध्वनि सम्बन्धी प्रयोग करने लगे। अन्त में, उन्होंने ऑडियोमीटर नाम के एक ध्वनि-यंत्र का आविष्कार किया, जो किसी व्यक्ति की सुनने की क्षमता का मापन कर सकता है।

हारमोनिक टेलीग्राफ की धुन

ध्वनि की सूक्ष्मता का अध्ययन,

बधिरों के लिए शब्ददान तथा ध्वनि-यंत्रों का आविष्कार करते-करते, अब वे एक ऐसा सन्देशवाहक टेलीग्राफ बनाना चाहते थे जिसके द्वारा एक ही तार के माध्यम से एक-साथ कई टेलीग्राफ सन्देश पहुँचाए जा सकें। अपने एक सहायक – थॉमस वॉटसन – के साथ बिजली से चलने वाले इस सन्देशवाहक 'ट्रांसमीटर' को बनाने का प्रयोग करते हुए उन्होंने 'हारमोनिक' सिद्धान्त की खोज की। उन्होंने पाया कि अलग-अलग आवृत्तियों की ध्वनि तरंगें एक-साथ एक ही तार के ज़रिए भेजी जा सकती हैं। और इस तरह, मेरा आविष्कार करने वाले ग्राहम बेल ने इस ट्रांसमीटर और 'हारमोनिक टेलीग्राफ' का आविष्कार किया।

हारमोनिक टेलीग्राफ के आविष्कार ने ग्राहम बेल को इस दिशा में सोचने पर मजबूर किया कि किस तरह इसके सिद्धान्त को टेलीग्राफी के अलावा इन्सानी शब्दों के प्रसारण के लिए उपयोग किया जाए। और यहाँ से मेरी, यानी कि टेलीफोन की शास्त्रीयता का अध्ययन ग्राहम बेल ने प्रारम्भ किया। उन्होंने इसके लिए ध्वनि तरंगों पर खूब अध्ययन और प्रयोग किए। यही मेरे जन्म की भूमिका थी।

रूप लेता मैं

मेरा प्रारम्भिक रूप बहुत ही अस्पष्ट था। मेरा जन्मदाता मुझ पर अनेकानेक प्रयोग करता जा रहा था और मेरे शरीर में तरंगें नृत्य करने लगी थीं। ध्वनि-तरंगों के कारण मेरे शरीर से भी तरंगमयी ध्वनि विस्तारित

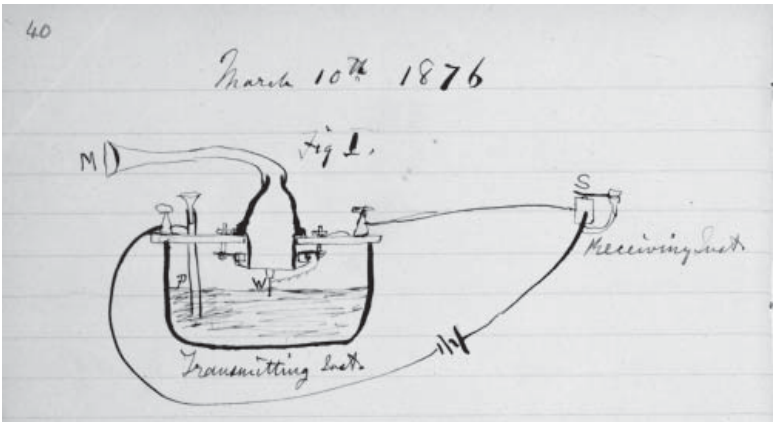

चित्र इंटरनेट से साभार।

ग्राहम बेल की प्रयोग सम्बन्धी नोटबुक से 10 मार्च, 1876 की एंट्री का एक चित्र। रेखाचित्र उस पहले टेलीफोन का है जिसका आविष्कार उस दिन हुआ था। रेखाचित्र में, 'P' एक ब्रास पाइप है, 'W' प्लैटिनम की तार है, 'M' माउथपीस है जिसमें मुँह लगाकर बोला जाता है, तथा 'S' रिसीविंग इंस्ट्रूमेंट है जिससे कान लगाकर आवाज़ सुनी जाती है।

होती थी। इस समय मेरी आकृति और निर्माण की पूर्ण कल्पना शायद मेरे अनुसन्धानकर्ता ने कर ली थी। मेरा शरीर और भी अधिक विचित्र होता गया। एक पेटी जैसा मेरा शरीर, ऊपर दो कीलें जिनमें रिसीवर रखा जाता। इस रिसीवर के दो भाग कर दिए गए। एक तो मेरा मुँह जिसे लेकर टेलीफोन पर बोलने वाला व्यक्ति बोलता है, और दूसरा मेरा कान है जिसके द्वारा वह दूसरों की उच्चारित ध्वनियों को सुनता है। दरअसल, प्रारम्भ में मेरे कान और मुँह अलग-अलग हुआ करते थे। बाद में, उन्हें एक ही स्थान पर रख दिया गया। मेरा रंग भी अब इतना मनमोहक हो गया है कि टेलीफोन करने वाला प्रत्येक व्यक्ति तो आकर्षित होता ही है, इसके साथ ही राहगीरों की दृष्टि भी मुझ पर अटक-अटक जाती है।

पेटेंट एक, दावेदार दो

14 फरवरी 1876 को ग्राहम बेल ने मेरे पेटेंट के लिए युनाइटेड स्टेट्स के पेटेंट्स और ट्रेडमार्क कार्यालय में एक आवेदन-पत्र दिया। मेरे अनुसन्धानकर्ता के आवेदन-पत्र देने के ठीक दो घण्टे बाद एक अन्य आविष्कारक – एलिशा ग्रे – ने भी एक आवेदन-पत्र दिया। इस आवेदन-पत्र में भी मेरे ही आविष्कार के पेटेंट की गुज़ारिश थी। यानी कि मेरे निर्माण की कल्पना दोनों व्यक्तियों ने स्वतंत्र रूप से कर ली थी। ग्राहम बेल तो मेरा प्रथम आविष्कारक था, किन्तु उसके साथ ही दूसरी आविष्कारक एलिशा ग्रे भी थी। दोनों ने अपने स्वामित्व का दावा किया। मुकदमे चले। अन्त में, मेरी खोज का पेटेंट ग्राहम बेल के नाम दिया गया।

और वे जादुई पहले शब्द...

ग्राहम बेल ने 10 मार्च 1876 को बॉस्टन स्थित अपनी प्रयोगशाला में मेरी पहली यंत्र-क्रिया की। एक छोर पर मेरा आविष्कारक खड़ा हो गया और दूसरे छोर पर वॉटसन, मेरे अनुसन्धानकर्ता का सहायक, जो दूसरे कमरे में था। ट्रांसमीटर (माउथपीस) लेकर ग्राहम बेल ने कहा, "मिस्टर वॉट्सन, कम हीयर – आई वॉंट टू सी यू।"

(मिस्टर वॉटसन, यहाँ आइए – मैं आपको देखना चाहता हूँ।)

और रिसीवर पर यह सुनकर, वॉटसन कमरे से बाहर निकले और बेल के सामने आकर खड़े हो गए।

ये प्रथम उच्चारण थे जिनके द्वारा ग्राहम बेल ने मेरा उद्घाटन किया। उसने मेरा प्रदर्शन सबसे पहले फिलाडेल्फिया में किया। यहाँ ही ग्राहम बेल ने एक प्रयोगशाला खोलने की योजना बनाई। इसके पश्चात् तो मेरे स्वरूप में अनेक परिवर्तन और परिवर्धन किए जाने लगे। मैं एक ऐसा साधन साबित हुआ जिसके द्वारा दूर और पास के संवादों को जोड़ दिया गया।

मेरे आविष्कारक का कीर्ति काल

बाद में, मेरे अनुसन्धानकर्ता एलेक्ज़ेंडर ग्राहम बेल ने बडेक, नोवा स्कोश्या में अपना घर बनाया और अन्य खोजों में जुट गया। वहाँ रहते हुए मेरे आविष्कारक ने अनेक अन्य आविष्कार किए। शुरुआत में उसके विषय में यह कहा जाता था कि उसे न गणित का ज्ञान था, न भौतिकी, रसायन या अन्य तकनीकी ज्ञान था, इसलिए यह तो एक अकस्मात घटना मात्र ही थी कि मेरा आविष्कार हो गया और उसका श्रेय एलेक्ज़ेंडर ग्राहम बेल को मिला। मगर धीरे-धीरे मेरे आविष्कारक के आलोचकों ने यह स्वीकार कर ही लिया कि उन्हें तकनीकी ज्ञान भी था और उसके अतिरिक्त वे ध्वनि-विज्ञान के पण्डित भी थे।

एलेक्ज़ेंडर ग्राहम बेल ने सन् 1912 में 'विश्व भर में अँग्रेज़ी' की व्यापकता के लिए अपील की। अँग्रेज़ी के ध्वनि सम्बन्धी प्रयोग करते हुए उसने ही सर्वप्रथम यह कहा था कि ध्वनि-विज्ञान की दृष्टि से अँग्रेज़ी ही ऐसी भाषा है जिसे विश्व के सभी भूभागों के निवासी उच्चारित कर सकते हैं। 1898 में ग्राहम बेल नेशनल जियॉग्रैफिक सोसाइटी के दूसरे सभापति के रूप में चुने गए। इसी समय के इर्द-गिर्द वे स्मिथसोनियन इंस्टीट्यूट के प्रधान के तौर पर भी

चित्र इंटरनेट से साभार।

नियुक्त किए गए। 2 अगस्त 1922 को एलेक्ज़ेंडर ग्राहम बेल की मृत्यु हो गई। मेरा आविष्कारक इस तिथि को इस धरा से उठ गया किन्तु जब आप मेरा रिसीवर उठाने के लिए बढ़ते हैं, तब मैं अपनी भाषा में ग्राहम बेल का नाम जपते हुए बज उठता हूँ। बजता रहता हूँ तब तक, जब तक कोई मेरे रिसीवर को उठा नहीं लेता। मैं टेलीफोन हूँ। विश्व का अत्यन्त महत्वपूर्ण वैज्ञानिक आविष्कार।

1892 में, ग्राहम बेल न्यू यॉर्क से शिकागो तक की लम्बी दूरी की टेलीफोन लाइन के उद्घाटन में कॉल लगाते हुए।

हरिशंकर परसाई (1924-1995): हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध व्यंगकार थे। व्यंग रचनाओं के अलावा उपन्यास और लेख भी लिखे। उनका जन्म जमानी, होशंगाबाद (मध्य प्रदेश) में हुआ था। वे हिन्दी के पहले रचनाकार हैं जिन्होंने व्यंग्य को विधा का दर्जा दिलाया और उसे हल्के-फुल्के मनोरंजन की परम्परागत परिधि से उबारकर समाज के व्यापक प्रश्नों से जोड़ा। साहित्य अकादमी पुरस्कार, शिक्षा सम्मान (मध्य प्रदेश शासन), शरद जोशी सम्मान आदि से सम्मानित।

चित्र: हरमन: चित्रकार हैं। दिल्ली कॉलेज ऑफ आर्ट, नई दिल्ली से फाइन आर्ट्स (चित्रकारी) में स्नातक और अम्बेडकर यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली से विज़ुअल आर्ट्स में स्नातकोत्तर। भटिंडा, पंजाब में रहते हैं।

यह विज्ञान गल्प मित्र-बन्धु-कार्यालय, जबलपुर द्वारा सन् 1964 में प्रकाशित हरिशंकर परसाई की किताब *वैज्ञानिक कहानियाँ* से लिया गया है। यह किताब तैलंगाना क्षेत्र की ग्यारहवीं कक्षा के लिए नॉनडिटेल्ड प्रथम भाषा की पाठ्यपुस्तक के रूप में आन्ध्र प्रदेश शिक्षा विभाग द्वारा दी गई स्वीकृति के तहत प्रकाशित की गई थी।

यह लेख मूल लेख का सम्पादित स्वरूप है।

पेंग गाँव की चेंग कथाएँ

माधव केलकर

शुरुआत एक स्कूल विज़िट के किस्से से करता हूँ। मैं बिहार की एक शाला में प्राचार्य कक्ष में शिक्षा की गुणवत्ता पर बातचीत कर रहा था। प्राचार्य महोदय ने बताया कि वे अपने साथी शिक्षकों के साथ मिलकर एक नवाचार की कोशिश कर रहे हैं। उन्होंने मेरे सामने कक्षावार बने कुछ रजिस्टर रखे जिनमें हरेक दिन हर पीरियड में पढ़ाए जाने वाले पाठ, सम्बन्धित गतिविधि, बच्चों द्वारा पूछे गए सवाल, प्राचार्य की टिप्पणी आदि लिखने की जगह बनाई गई थी। उन्होंने मुझसे कहा कि मैं उनके इस रजिस्टर वाले आयडिया पर कुछ सुझाव दूँ। मैंने कहा, "यदि आप इसी फॉर्मेट पर सुझाव चाहते हैं तो वो दे दूँगा। लेकिन मैं सोचता हूँ कि रजिस्टर में इतनी कम जगह में विस्तार पूर्वक लिखने में दिक्कत होगी। बेहतर होगा कि सभी शिक्षक रोज़ शाला के बाद एक रिफ्लेक्टिव नोट लिखा करें और हफ्ते में एक बार सभी साथ बैठकर इन्हें पढ़ें, सुनें और चर्चा करें।" इस पर प्राचार्य जी ने कहा, "ठीक है, हम कोशिश करेंगे। लेकिन इसके लिए हमें मार्गदर्शन चाहिए होगा।" मैंने भी इस प्रयास में मदद के लिए हामी भर दी। तो आगे जो कुछ लिखने वाला हूँ वो ऐसे ही नवाचार पसन्द शिक्षकों और शिक्षक प्रशिक्षकों के लिए है।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और शिक्षक

शिक्षा में गुणवत्ता लाने के लिए विविध तरह के प्रयास शासन द्वारा विभिन्न योजनाओं, प्रशिक्षण, नई पाठ्यचर्या, नई पाठ्य पुस्तकों के माध्यम से किए जाते हैं। इसी सिलसिले में शासन के साथ मिलकर कई गैर-शासकीय संस्थाएँ भी लर्निंग

लॉस, एफएलएन, दक्षता उन्नयन, प्रशिक्षण, मॉड्यूल निर्माण जैसी पहलकदमी के साथ इन कोशिशों में शामिल हो जाती हैं।

ऐसे सभी प्रयास इस विश्वास पर चलते हैं कि शिक्षक एक प्रमुख भूमिका में इन्हें कक्षा में बच्चों तक लेकर जाएगा। इसी तरह गैर-शासकीय संस्थाएँ भी इसी विश्वास पर चलती हैं कि उनके कार्यकर्ता शालाओं में शिक्षकों को समुचित मदद देते रहेंगे। और कुल मिलाकर शिक्षक कक्षा और शाला के वातावरण में यथासम्भव बदलाव कर पाएगा।

शिक्षकों के प्रशिक्षण में प्रशिक्षणकर्ता बार-बार इस बात पर ज़ोर देते हैं कि शिक्षकों को रिफ्लेक्टिव टीचिंग करनी चाहिए, रिफ्लेक्टिव डायरी लिखनी चाहिए, रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट लिखनी चाहिए। शिक्षकों का चिन्तन और लेखन एक महत्वपूर्ण दस्तावेज़ होता है। इसी तरह गैर-शासकीय संस्थाएँ भी अपने कार्यकर्ताओं से रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट बनाने के लिए कहती हैं। कार्यकर्ताओं के फील्ड विज़िट के ब्यौरे और देखी गई या खुद करवाई गतिविधियों पर समीक्षात्मक लेखन यकीनी तौर पर एक प्रमुख दस्तावेज़ साबित होता है। इन दोनों तरह के दस्तावेज़ीकरण से शिक्षकों एवं कार्यकर्ताओं के लिए अपने काम को समीक्षात्मक नज़रिए से देखना और अपनी रणनीतियों में ज़रूरी बदलाव कर पाना सम्भव हो पाता है।

आप किसी शाला में शिक्षक द्वारा हाल ही में कक्षा में पढ़ाए पाठ या टॉपिक्स के ब्यौरों को देखेंगे तो उसमें शायद ही रिफ्लेक्शन जैसा कुछ दिखेगा। तारीख, पाठ का नाम, क्या पढ़ाया – इतना ही लिखा होता है। लेकिन प्लान क्या था, किस तरह करवाया गया, बच्चे कितना समझ पाए, किन अवधारणाओं में कौन-सी चुनौतियाँ पेश आईं, बच्चों के क्या सवाल थे, शिक्षक किन सवालों के जवाब नहीं दे पाया, अनुतरित सवालों के जवाब किस तरह देने का विचार है, शिक्षक को पाठ को पढ़ाने में किस तरह की दिक्कतें पेश आईं – ऐसी तमाम बातें रिपोर्ट या डायरी का हिस्सा नहीं बन पातीं। कुछ शिक्षकों से मेरी बातचीत हुई तो उन्होंने कहा कि उन्हें न तो रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट का अर्थ मालूम है और न उन्होंने ऐसी किसी रिपोर्ट का उदाहरण ही देखा है। इसलिए ऐसी रिपोर्ट में क्या हो सकता है और क्या नहीं, इसको लेकर उन्हें कोई अन्दाज़ नहीं है। उन्होंने कहा, "लेकिन कुछ उदाहरण वगैरह बताए जाएँ तो हम भी कोशिश कर सकते हैं।"

इसी तरह एक गैर-शासकीय संस्था के कार्यकर्ताओं ने बताया कि उन्हें भी रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट लिखने के लिए कहा जाता है। एक बार कोई रिसोर्स पर्सन भी आए थे जिन्होंने घण्टे भर के सेशन में पॉवर पॉइंट की मदद से रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट के बारे में

समझाया। इस सेशन से उन्हें इतना समझ आया कि फील्ड विज़िट को डीटेल में लिखना है। उनका कहना था कि "लेकिन हर दिन शाम को हमें जो ऑनलाइन फॉर्म भरना होता है, उसमें शब्द सीमा होती है। इसलिए चाहकर भी हम डीटेल में नहीं लिख सकते। दूसरी समस्या है, हमारे सामने ऐसे कोई ठोस उदाहरण भी नहीं हैं जिससे समझ में आए कि अपनी रिपोर्ट राइटिंग को कैसे बेहतर बनाया जा सकता है।"

एनसीएफ व एनसीटीई लगातार सहभागिता-पूर्ण टीचिंग-लर्निंग अप्रोच पर ज़ोर देता रहा है। इनकी अनुशंसाओं के मुताबिक शिक्षकों को इस तरह से तैयार किया जाना चाहिए कि वे बच्चों को पढ़ाने में आनन्द का अनुभव करें और सीखने वाले की चुनौतियों के प्रति संवेदनशील होकर समाधान सोच सकें।

रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट के लिहाज़ से यदि हम शिक्षकों को ध्यान में रखते हुए सोचें तो समझ आएगा कि शिक्षक के कक्षाई अनुभव, पाठ को तैयार करना, सह-शिक्षकों से विचार-विमर्श, समुदाय के साथ बातचीत, अपने अनुभवों का समीक्षात्मक विश्लेषण करना, आने वाले कल के लिए अपनी अप्रोच में क्या सुधार करना है – ये सब रिफ्लेक्टिव राइटिंग के हिस्से हो सकते हैं।

समीक्षात्मक चिन्तन के अवसर?

अब ज़रा यह सोचकर देखते हैं कि एक शिक्षक के लिए समीक्षात्मक चिन्तन के कितने मौके हो सकते हैं।

एक – जब शिक्षक कक्षा में पढ़ा रहा हो और जैसे ही उसे यह समझ आए कि उसे अपने पढ़ाने के तरीके में बदलाव करना होगा, या कुछ नए उदाहरण बताने होंगे, या बच्चों को किसी टीएलएम को दिखाने से बेहतर समझ में आएगा – तब शिक्षक तुरन्त

एक्शन ले लेता है। इसे रिफ्लेक्शन इन एक्शन (Reflection in action) कहते हैं।

दो – शिक्षक कक्षा में पढ़ाने के बाद जब भी थोड़े खाली समय में अपनी कक्षा के बारे में सोचता है और उसे समझ आता है कि आज की कक्षा में क्या कमीबेशी रह गई थी, तो उसे चिन्हित कर उसके निदान के बारे में सोचता है। इस प्रक्रिया को रिफ्लेक्शन ऑन एक्शन (Reflection on action) कहते हैं।

तीन – जब कोई शिक्षक अपनी आज की कक्षा में हुई कमीबेशियों के बारे में सोचते हुए, अगले दिन की कक्षा के लिए एक बेहतर योजना बनाकर बच्चों को एक बेहतर अनुभव देने की कोशिश करता है। इस प्रक्रिया को रिफ्लेक्शन फॉर एक्शन (Reflection for action) कहते हैं।

यदि उपरोक्त में से पहली या दूसरी प्रक्रिया की शुरुआत हो गई है तो मानकर चलिए कि शिक्षक जल्द ही रिफ्लेक्टिव टीचिंग के साथ-साथ रिफ्लेटिव रिपोर्ट भी बनाने लगेंगे। हो सकता है, अभी तक शिक्षक एक संक्षिप्त वर्णनात्मक रिपोर्ट लिख रहा था लेकिन आगे चलकर थोड़ी गहराई वाली वर्णनात्मक रिपोर्ट लिखेगा, और बाद में समीक्षात्मक रिपोर्ट लिखेगा।

यहाँ शिक्षकों व फील्ड कार्यकर्ताओं की सुविधा के लिए कुछ वर्णनात्मक, थोड़ी गहरी और कुछ समीक्षात्मक रिपोर्ट साझा कर रहे हैं। इन रिपोर्ट को बतौर नमूना या एक विचार के रूप में ही मानकर चलिए। आप इन्हें कॉपी न करते हुए अपनी समझ के मुताबिक रिपोर्ट बनाएँगे, यह उम्मीद रहेगी। इन रिपोर्ट का सम्बन्ध किसी संस्था, किसी शाला के साथ सीधा-सीधा न जोड़ा जा सके, इस लिहाज़ से इन्हें 'ऐंग गांव' की रिपोर्ट कहा जा रहा है। इन्हें आप काल्पनिक भी मान सकते हैं।

कुछ उदाहरण शालाओं से

धातु-अधातु पाठ
(संक्षिप्त वर्णनात्मक रिपोर्ट)

कक्षा सातवीं में मेरी आज की योजना में धातु और अधातु पाठ पढ़ाना था। मैंने इस पाठ से सम्बन्धित एक चार्ट तैयार किया था। यदि आप चार्ट बनाकर ले जाते हैं तो बच्चों को अमूर्त अवधारणाएँ भी आसानी-से समझ में आ जाती हैं। मैंने बच्चों से कहा कि वे प्रमुख बिन्दुओं को अपनी नोटबुक में नोट करते चलें। मैंने देखा, कुछ बच्चे अपनी नोटबुक में कुछ नहीं लिख रहे थे। बच्चों के इस व्यवहार का विश्लेषण करने की कोशिश की तो मुझे समझ आया कि शायद बच्चों को ऐसा कुछ विशेष नहीं लगा होगा जिसे नोट किया जाए। इसलिए उन्होंने नोटबुक में कुछ नहीं लिखा।

– एक शिक्षक, माध्यमिक शाला, ऐंग गांव

गंदे जल का निपटान
(संक्षिप्त वर्णनात्मक रिपोर्ट)

आज मुझे कक्षा सातवीं को - गंदे जल का निपटान - अध्याय करवाना था। मैं कक्षा में गया। वहाँ बच्चे काफी शोर कर रहे थे। एक-दूसरे को कागज़ की गोलियाँ फेंककर मार रहे थे। मैंने डस्टर को टेबल पर बजाया और कक्षा शान्त हो गई। तुरन्त एक-दो बच्चे अपने साथियों की शिकायत करने लगे। मैंने सभी को कहा, "कीप सायलेंस। चुप रहो। शोरगुल किया तो कक्षा से बाहर कर दूँगा।"

फिर विज्ञान की किताब खोलकर 'गंदे जल का निपटान' पाठ सभी बच्चों से खोलने के लिए कहा। बच्चों से कहा कि बारी-बारी से हर बच्चा खड़ा होकर एक-एक पैराग्राफ पढ़ता जाएगा। जहाँ कोई बात समझ न आए, तुरन्त पूछ ले। इस तरह हमने पाठ को पूरा पढ़ा। मैंने बच्चों से कहा कि पीछे दिए सवाल होमवर्क हैं। उन्हें घर से करके लाना है।

- एक शिक्षक, माध्यमिक शाला, ऐंग गांव

टिप्पणी- *उपरोक्त दोनों रिपोर्ट को संक्षिप्त वर्णनात्मक रिपोर्ट कहना उचित होगा। इन्हें कक्षा से बाहर, थोड़ी फ़ुर्सत मिलने पर लिखा गया है। पहली रिपोर्ट में शिक्षक धातु-अधातु वाले पाठ की कठिन अवधारणाओं के लिए चार्ट (टीएलएम) लेकर गया। सम्भवतः बोर्ड पर पाठ के प्रमुख बिन्दु लिखवा दिए गए। लेकिन पाठ की कठिन अवधारणाएँ क्या थीं, बच्चों को उन्हें समझाने में शिक्षक कहाँ तक सफल हुआ, क्या कोई प्रयोग करके भी देखे गए, बच्चों के सवाल क्या थे, अगले पीरियड के लिए क्या प्लानिंग है – ऐसी ज़्यादातर महत्वपूर्ण बातें इस रिपोर्ट से गायब हैं। आज की कक्षा के अनुभव के बारे में भी कुछ खास नहीं कहा गया।*

दूसरी संक्षिप्त रिपोर्ट - गंदे जल का निपटान - में तो शिक्षक ने पाठ पढ़ाने का एकदम शॉर्टकट तरीका अपनाया - न प्लान है, न रिफ्लेक्शन। कक्षा को खामोश कैसे बिठाया गया, सिर्फ उसका जीवन्त वर्णन है।

कोशिश रहे कि ऐसी संक्षिप्त रिपोर्ट न बनाई जाए। हमारे अवलोकन एवं बच्चों के साथ अनुभव वगैरह भी रिपोर्ट में शामिल होना अत्यन्त ज़रूरी हैं।

थोड़ी गहराई से लिखी गई रिपोर्ट

कक्षा-2: जानवरों व पक्षियों पर चर्चा

आज का प्लान:

- जानवरों व पक्षियों पर बातचीत की जाएगी।
- जंगली जानवर, पालतू जानवर और सवारी के काम आने वाले जानवरों पर बातचीत।
- जानवरों के घर कहाँ होते हैं?
- जानवरों के विविध रंग।
- घर में रहने वाले जानवरों पर बातचीत।
- क्या जानवर एक-दूसरे की मदद करते हैं?

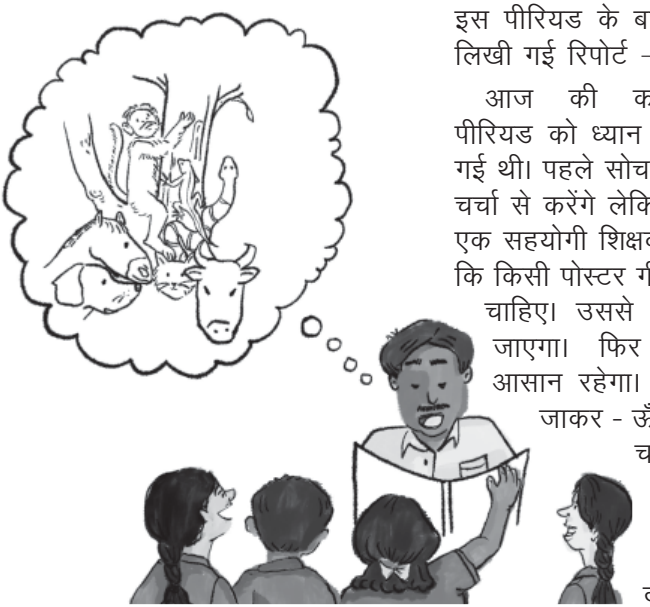

इस पीरियड के बाद शिक्षिका द्वारा लिखी गई रिपोर्ट –

आज की कार्य-योजना एक पीरियड को ध्यान में रखकर बनाई गई थी। पहले सोचा था कि शुरुआत चर्चा से करेंगे लेकिन टीचर्स रूम में एक सहयोगी शिक्षक ने सुझाव दिया कि किसी पोस्टर गीत से शुरू करना चाहिए। उससे एक माहौल बन जाएगा। फिर चर्चा करवाना आसान रहेगा। तो, मैंने कक्षा में जाकर - ऊँट चला भाई ऊँट चला – पोस्टर गीत से शुरुआत की। हमने एक-एक पंक्ति को दो-तीन बार दोहराया भी। सभी बच्चे खुलकर गा रहे थे। जो नहीं खुल रहे थे, उन्हें इशारा करके शामिल किया जा रहा था।

फिर सभी से ऊँट को लेकर कुछ सवाल पूछे गए। जैसे - किस-किस ने ऊँट देखा है, ऊँट की सवारी किस-किस ने की है, ऊँट कितना ऊँचा होता है आदि। इससे आगे की चर्चा खुल गई। बच्चों से ऐसे जीवों के नाम पूछे गए जो उन्होंने देखे हैं। इस सूची में गाय, कुत्ता, चूहा, तितली, क्रॉकरोच, साँप, गिरगिट, छिपकली, चींटी, तोता, चिड़िया, मुर्गी, कौआ, शेर, हिरन, बकरी, मक्खी आदि शामिल हो गए।

यह पूछने पर कि ये जीव रहते

कार्य-योजना व गतिविधियाँ:

- जानवरों-पक्षियों पर चर्चा में कुछ चित्रों एवं किताब का उपयोग। चर्चा गोले में बैठकर।
- बच्चों को दो समूहों में बाँटकर एक समूह के बच्चे अपने जाने-पहचाने जीव की आवाज़ निकालेंगे। दूसरे समूह के बच्चे उस जीव को पहचानेंगे। तत्पश्चात उस जीव की कद-काठी, रंग, वह कहाँ रहता है आदि पर भी बात होगी।
- *ऊँट चला* या *धम्मक धम्मक आता हाथी* पोस्टर गीत को मिलकर गाएँगे।
- *लालू-पीलू* कहानी पर बच्चों से रोल प्ले करवाना।

कहाँ हैं, कुछ बच्चों ने बताया - घर में, पेड़ पर, ज़मीन पर, बिल में, दीवार पर, पिंजरे में आदि।

"इनमें से किसे पालते हैं और कौन-से ऐसे हैं जिन्हें नहीं पालते?" बच्चों ने तोता, गाय, कुत्ता, मुर्गी, बिल्ली को पालने वाला बताया। एक बच्चे ने बोला, "पालतू मतलब हम उनको खाना-पानी देते हैं, उनकी देखभाल करते हैं। वो बीमार हो जाएँ तो इलाज करवाते हैं।"

बच्चों ने साँप और शेर को जंगली बताया। उन्होंने कहा कि जो जंगल में रहते हैं, वो जंगली जानवर होते हैं। बच्चों से पूछा कि जंगली जीवों को खाना-पानी कौन देता होगा। एक-दो बच्चों ने कहा, "मालूम नहीं।" लेकिन कुछ बच्चों ने कहा कि "जंगल में वो अपने लिए शिकार खोज लेते हैं, नाले का पानी पी लेते हैं।"

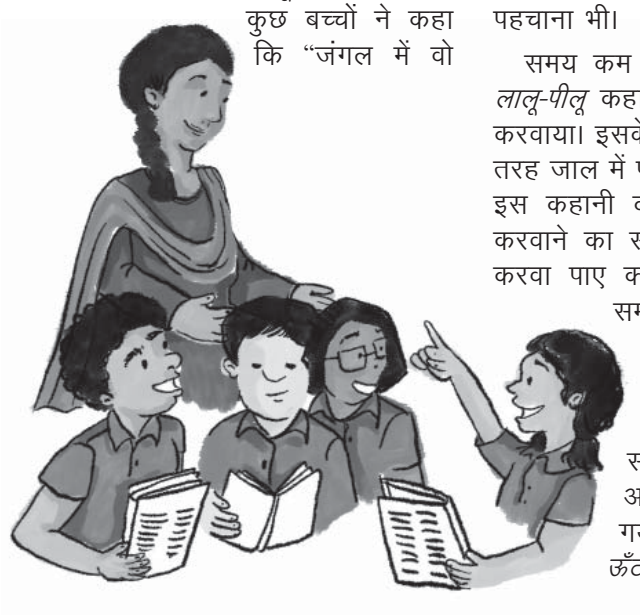

"छिपकली, क्रॉकरोच, मकड़ी वगैरह रहते तो घर में ही हैं लेकिन इन्हें हम पालतू क्यों नहीं कहते?" यह पूछने पर एक-दो बच्चों ने बोला कि "हम छिपकली-कॉक्रोच को न पालते हैं, न खाना देते हैं, न पानी पिलाते हैं। वो ऐसे ही घर में घुस आते हैं और हमारे घर में रहने लगते हैं। साँप और चूहे भी कभी-कभी हमारे घर में घुस जाते हैं।"

इसके बाद आसपास के जीवों की आवाज़ वाली गतिविधि की। बच्चों ने गाय, कुत्ता, बकरी, मच्छर, बिल्ली, मुर्गे आदि की आवाज़ निकाली और बाकी बच्चों ने इन आवाज़ों को पहचाना भी।

समय कम होने के कारण हमने *लालू-पीलू* कहानी का रोल प्ले नहीं करवाया। इसके अलावा चूहे ने किस तरह जाल में फँसे शेर की मदद की, इस कहानी को भी रीड अलाऊड करवाने का सोचा था, लेकिन नहीं करवा पाए क्योंकि इसके लिए भी समय नहीं बचा था।

आज की कक्षा के बारे में सोचती हूँ तो लगता है कि मेरे साथी शिक्षक द्वारा अन्तिम समय पर दिया गया सुझाव अच्छा था। *ऊँट चला* कविता से अच्छा

माहौल बन गया और आगे के सेशन में बच्चों की भागीदारी भी अच्छी रही। बच्चों ने पालतू और जंगली जीवों के बारे में काफी अच्छे से अन्तर करके बताया। मुझे कुछ फोटोग्राफ या वीडियो साथ ले जाने चाहिए थे ताकि बच्चे उन्हें भी देख पाते। कक्षा में अभी भी 4-5 बच्चों की बातचीत में काफी कम भागीदारी थी। मुझे उनके साथ अलग से बातचीत करके समझना चाहिए कि वे इतना कम क्यों बोलते हैं।

चूँकि चर्चा विस्तार से हुई इसलिए टाइम मैनेजमेंट थोड़ा गड़बड़ा गया। लेकिन कोशिश करेंगे कि जो आज छूट गया है, उसे अगले किसी पीरियड में करवाया जा सके।

- एक शिक्षिका, प्राथमिक शाला, ऐंग गाँव

टिप्पणी– *इस रिपोर्ट में शिक्षिका ने एक अच्छा और महत्वाकांक्षी प्लान बना लिया था जो शुरू से ही कई चीज़ों को समेटता हुआ दिखाई दे रहा था। शिक्षिका काफी ईमानदारी से जो करवा पाई, जो छूट गया और टाइम मैनेंजमेंट की बात करती है। बच्चों के साथ बातचीत के ब्यौरे को थोड़ा विस्तार से बताती तो रिपोर्ट में और पुख्तापन आता। खैर, उन्होंने अपनी प्लानिंग और कमीबेशियों का आकलन कर मुद्दों को चिन्हित भी किया है। इस लिहाज़ से इसे थोड़ी गहराई में जाकर रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट बनाना कह सकते हैं।*

गंदे जल का निपटान

एक रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट

आज मुझे कक्षा सातवीं को – गंदे जल का निपटान – अध्याय करवाना था। मैंने तैयारी के लिए पाठ को एक बार पढ़ा और कुछ पारिभाषिक शब्दों को लेकर तैयारी की। जैसे गंदा जल, अपशिष्ट जल, मल युक्त जल, विश्व जल दिवस, दूषित जल जनित रोग, जल का उपचार, गंदा जल निपटान में मानव श्रम आदि। पिछले वर्ष देश में सीवर लाइन की सफाई के दौरान श्रमिकों के साथ हुई दुर्घटनाओं की खबरों की कटिंग और औद्योगिक इकाइयों द्वारा जल प्रदूषण की खबरें भी साथ रखीं।

कक्षा में पाठ पढ़ाने से पहले हमने पिछले साल पढ़े गए पेयजल वाले पाठ और पेयजल के स्रोतों के बारे में बात की। काफी बच्चों को उस पाठ के बारे में बहुत-सी बातें याद थीं। फिर हमने पेय जल दूषित कैसे होता है, इसके बारे में थोड़ी बात की। बच्चे इस बारे में भी थोड़ा-बहुत बता पा रहे थे।

फिर हमारे घरों से निकलने वाले पानी पर बात की। बच्चों ने बताया कि घर से निकलने वाला पानी पास की नालियों के ज़रिए नाले या नदी में जाकर मिल जाता है। यह पानी अपने साथ 'सभी गंदगी' लेकर जाता है। 'सभी गंदगी' का मतलब पूछने पर बच्चों ने बताया – कागज़,

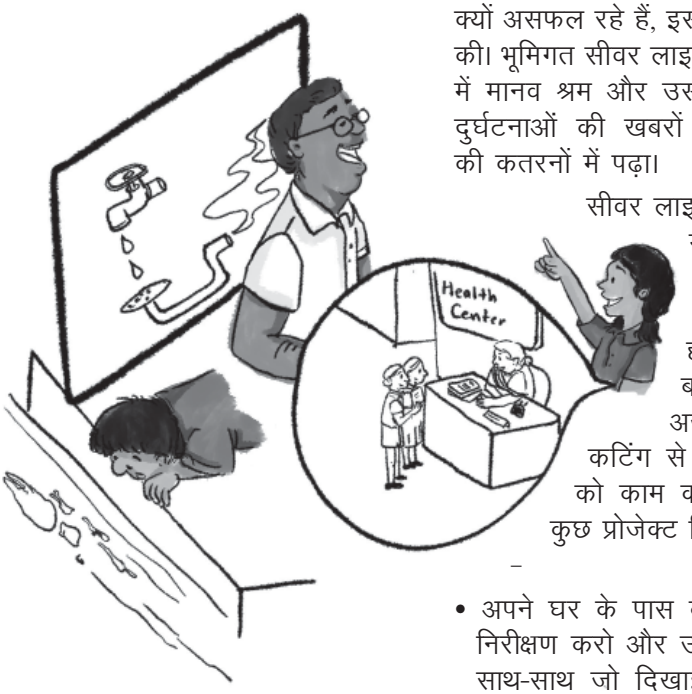

प्लास्टिक, साबुन-डिटरजेंट, टॉयलेट की गंदगी, सड़ा खाना आदि। बच्चों से पूछा गया कि "क्या इस पानी में कोई जीव-जन्तु भी होते हैं?" इस पर बच्चों ने बताया कि "हाँ, साँप-मेंढक तो होते ही हैं, लेकिन बहुत सारे सूक्ष्मजीव भी होते हैं जो तबीयत खराब कर देते हैं।"

जैसे-जैसे हम पाठ में आगे बढ़ते जा रहे थे, जल प्रदूषित कैसे होता है, इसमें इन्सान की क्या भूमिका होती है, मल-युक्त जल और औद्योगिक अपशिष्ट के निपटान के उपायों आदि के बारे में जाना। निपटान के उपाय क्यों असफल रहे हैं, इस पर भी चर्चा की। भूमिगत सीवर लाइनों की सफाई में मानव श्रम और उससे सम्बन्धित दुर्घटनाओं की खबरों को अखबार की कतरनों में पढ़ा।

सीवर लाइन की सफाई में आने वाली चुनौतियों और काम के हालात के बारे में भी अखबार की कटिंग से जाना। बच्चों को काम करने के लिए कुछ प्रोजेक्ट दिए गए, जैसे –

- अपने घर के पास की नाली का निरीक्षण करो और उसमें पानी के साथ-साथ जो दिखाई दे रहा है, उसकी सूची बनाओ।
- नाली के पानी को सूक्ष्मदर्शी से देखकर, उसमें मौजूद जीवों के चित्र बनाना और उन्हें पहचानना।
- आपकी शाला से निकलने वाला गंदा जल जिन नालियों से होता हुआ पास के किसी नाले तक पहुँचता है, उसका रेखाचित्र बनाओ।
- प्रायमरी हैल्थ सेंटर पर जाकर पता करो कि पेचिश, खुजली, हैजा, पीलिया, मलेरिया, मस्तिष्क ज्वर आदि रोग दूषित जल से किस तरह होते हैं और इनके

रोकथाम के क्या उपाय हो सकते हैं।

प्रोजेक्ट कार्य के बारे जानने के बाद कुछ बच्चों ने कहा कि मैं उनके साथ प्रायमरी हैल्थ सेंटर जाकर सम्बन्धित व्यक्ति से मिलवा दूँ ताकि उन्हें अपने सवालों के सन्तोषजनक जवाब मिल सकें। इसके लिए मैंने हामी भर दी। कुछ बच्चों ने कहा कि उन्हें सूक्ष्मदर्शी से देखना सिखाया जाए। इसके लिए भी मैंने 'हाँ' कहा।

शाम को आज की कक्षा के बारे में लिखते हुए अच्छा लग रहा है। मेरी कक्षा में अभी भी ऐसे कुछ बच्चे हैं जो लिखने में कमज़ोर हैं। वे मन से सोचकर नहीं लिख पाते परन्तु उन्हें ब्लैकबोर्ड या किताब में कहीं कुछ लिखा मिल जाए तो उसे तुरन्त नोटबुक में लिख लेते हैं। वे अवधारणाओं को समझकर खुद सोचकर लिखें, मुझे इसके लिए कुछ विशेष प्रयास करने होंगे।

- एक शिक्षक, माध्यमिक शाला, ऐंग गाँव

टिप्पणी - अपनी पूर्ववर्ती रिपोर्ट के मुकाबले, यह रिपोर्ट थोड़ी बेहतर है। रिपोर्ट बेहतर इस मामले में है कि इसमें शिक्षक ने पाठ की तैयारी के लिए क्या किया, उसका प्लान क्या था, पहले के पाठ के साथ सहसम्बन्ध जोड़ना, विविध अवधारणाओं पर चर्चा करना और अन्त में बच्चों को कुछ प्रोजेक्ट कार्य देना जैसे बहुत-से पहलु शामिल हैं। इसके बाद की कुछ बातें, जैसे प्रोजेक्ट को बच्चों ने किस तरह किया, उनसे क्या हासिल किया जा सका आदि शिक्षक की अगली किसी रिपोर्ट का हिस्सा हो सकते हैं।

शिक्षकों के रिफ्लेक्टिव रिपोर्ट वाले इस हिस्से को अब यहीं रोकेंगे। उम्मीद है कि इस बातचीत और उदाहरणार्थ दी रिपोर्ट से कुछ मदद मिलेगी। अगले हिस्से में गैर-शासकीय संस्था के कार्यकर्ताओं की रिपोर्ट राइटिंग पर चर्चा करेंगे।

...जारी

माधव केलकर: *संदर्भ* पत्रिका से सम्बद्ध हैं।

चित्र: पूजा के. मैनन: *एकलव्य,* भोपाल में बतौर जूनियर ग्राफिक डिज़ाइनर काम किया है। वर्तमान में स्वतंत्र रूप से चित्रकारी कर रही हैं।

बालनाटक लिखते हुए...!

उपासना चौबे

बच्चों के लिए लिखना किस हद तक बड़ों के लिए लिखने से भिन्न है? बाल साहित्य, और खासकर बाल नाटक की क्या खूबियाँ होती हैं जो उसके असर और उसके मज़े को इतना अलग बनाती हैं? बच्चों के जीवन में नाटक कब कदम रखता है? और किस तरह उसका उपयोग बच्चे के व्यक्तित्व-विकास के लिए किया जा सकता है? ऐसे ही कुछ सवालों और बच्चों की दुनिया पर अन्तर्दृष्टियाँ पेश करता है यह लेख।

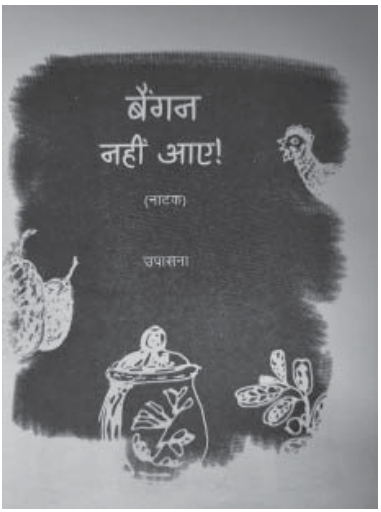

कोलकाता की संस्था 'थिंकआर्ट्स' द्वारा लेखकों के लिए आयोजित 'प्ले/राइट' नाम का एक ऑनलाइन रेसीडेंसी कार्यक्रम, जिसके तहत उपासना द्वारा तैयार किया गया बाल नाटक 'बैंगन नहीं आए', *एकलव्य* द्वारा प्रकाशित किया गया।

मैं अक्सर सोचती हूँ कि हम सब कितनी सारी चीज़ों से घिरे हुए हैं। एक वयस्क के रूप में जीवन और दुनिया को देखते हुए जब हम ऊब जाते हैं तो अक्सर अपनी उबाहट, अपनी चालाकियाँ और कुण्ठाएँ जाने-अनजाने हम बच्चों तक प्रेषित कर देते हैं। हम उन्हें अपने अनुभवों के हिसाब से सम्पादित और नियंत्रित करने की कोशिश करते हैं। हम भूल जाते हैं कि उनके लिए दुनिया अभी नई-नवेली और ताज़ी है। वे तो अभी सम्भावनाएँ तलाश रहे हैं, बगैर यह जाने कि सम्भावनाएँ क्या हैं। हमें तो अभी बहुत सारी चीज़ों से मुक्त होना बाकी है। वह तो भला हो किताबों का, जिन चीज़ों को अपना परिवार और समाज सामान्य कहता रहा, ये किताबें

ही थीं जिन्होंने सारी पोल-पट्टी खोल दी, जिन्होंने बताया कि चीज़ें इतनी सामान्य नहीं हैं। घर नैतिक शिक्षा की खान हैं जिसमें बच्चे के कुछ दिन बड़ों की नकल करते बीतते हैं। जब समझ आती है तब बच्चा उपदेश और आचरण का अन्तर भली-भाँति समझने लगता है।

मुझे लगता है कि किताबें मुझ तक देर से पहुँचीं। एक बच्चा रहे होने के क्रम में यदि अच्छी किताबें मिली होतीं तो बहुत-सी कुण्ठाओं और नकलीपन से मैं अपेक्षाकृत जल्द आज़ाद हो पाती। इनसे मुक्त होने में मेरी जो अतिरिक्त ऊर्जा लगी, उसके बनिस्बत कुछ रचनात्मक करने की कोशिश करती। इनसे आज़ादी एक सरल-सहज प्रक्रिया हो सकती थी, बशर्ते बच्चों तक सही किताबें पहुँचाई जाएँ।

बच्चों बनाम बड़ों का साहित्य

बच्चों के लिए लिखना मेरे लिए अनायास नहीं था। यह मेरी आन्तरिक इच्छा रही है कि बच्चों के लिए लिखूँ। हालाँकि, बच्चों का साहित्य और बड़ों का साहित्य, यह विभाजन ही कुछ अजीबो-गरीब लगता है। फिर भी मैं कहूँगी कि बड़ों की दुनिया का सबकुछ मैं बच्चों पर नहीं थोप सकती। मेरे लिए किसी सर्वसिद्ध तथ्य के पक्ष में तर्क देकर प्रमाणित करना कठिन है। मैं तर्क को समझते हुए एक-एक पायदान चढ़कर तथ्य तक पहुँचने में ज़्यादा सहज हूँ। जैसे कि मैंने एक संक्षिप्त-सा आलेख लिखने की कोशिश की - 'बच्चों का साहित्य बनाम बड़ों का साहित्य उर्फ सार्वभौम साहित्य'। शुरुआत में मैं इस अवधारणा के प्रति किंचित आश्वस्त थी कि साहित्य सार्वभौमिक होता है। इसे बच्चों और बड़ों के साहित्य में नहीं बाँटना चाहिए। जब मैंने लेख लिखने की कोशिश की तो मेरे तर्क मुझे किसी और ही दिशा में ले जा रहे थे। वहाँ अभी भी मेरे लिए बहुत कुछ अपरिचित है। मैंने शुरुआत में जो सोचा था, और जो अब समझ रही हूँ, वे एक-दूसरे के विपरीत हैं। पर यह गणित का कोई प्रामाणिक प्रमेय नहीं कि मैं गलत की जगह सही तर्क बिठाऊँ और अन्तिम सही उत्तर तक पहुँचकर, प्रमेय सिद्ध हुआ, लिख दूँ। बेशक, साहित्य और कला में भी एक गणितीय अनुशासन है पर वह बिलकुल भिन्न प्रकार का है। गणित संशय का समाधान करता है। साहित्य में संशय, सत्य की ओर बढ़ने का एक रास्ता है। परन्तु अन्तिम

सत्य जैसा साहित्य में कुछ नहीं, बल्कि गणित में विदित है। और गणित में जहाँ नहीं है, वहाँ अनन्त (∞) है। यह एक मात्र धरातल है जहाँ साहित्य और गणित एक हो जाते हैं।

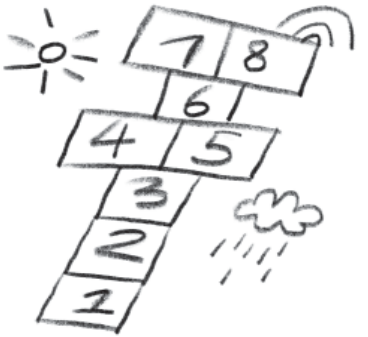

बहरहाल, जिसे हम बाल साहित्य कहते हैं, क्या उसे बड़ों के साहित्य से भिन्न होना चाहिए? यह प्रश्न एक दुधारी तलवार की भाँति है। यद्यपि बच्चे के लिए जो नया, अनूठा और आश्चर्यजनक है, वयस्क के लिए वे रोज़मर्रा की आम घटनाएँ हैं। तथापि वयस्क के लिए जो शब्द एवं अनुभव रूढ़ हो चुके हैं, देर सवेर वे भी बच्चे के दायरे में सम्मिलित होने वाले हैं। ध्यान देने वाली एक महत्वपूर्ण बात यह है कि बच्चों के लिए लिखी गई दुनिया की सारी क्लासिक और अच्छी कहानियाँ बड़ों के लिए समान रूप से रोचक, सरस और पठनीय हैं। किन्तु बड़ों का सबकुछ बच्चों के लिए नहीं है, हो भी नहीं सकता। यह एक बड़ा अन्तर है। यह अन्तर ही बताता है कि बच्चों के लिए लिखने से पूर्व अपनी समझ तथा अनुभवों को तटस्थ भाव से देखने तथा उन्हें लगातार संशोधित करते रहने की आवश्यकता है। ऐसा नहीं है कि आप सोचकर लिखते हैं कि बच्चों के लिए लिख रहे हैं। लेकिन कुछ तो ऐसा है जो बच्चों के लिए सटीक होता है। बच्चों की दुनिया में वह सबकुछ है जो एक वयस्क की दुनिया में होता है – कुण्ठाएँ, हिंसा, ईर्ष्या, घृणा, क्रोध, प्रेम। बस, वयस्कों की महत्वाकांक्षा को बच्चों की उम्मीद से बदल देना चाहिए।

बाल नाटक लेखन रेज़िडेंसी

पिछले साल तैरती हुई एक खबर मुझ तक पहुँच आई थी। कोलकाता की संस्था 'थिंक आर्ट्स' का (पराग-टाटा ट्रस्ट के सौजन्य से) 'राइटर इन रेज़िडेंट' का कार्यक्रम था जिसके अन्तर्गत बच्चों के नाटक तैयार करने थे। पहले-पहल मैंने इस खबर को टाल दिया। अचानक अन्तिम दिन याद आया कि ग्रेजुएशन के दिनों में बच्चियों को लेकर नुक्कड़ नाटकनुमा कुछ किया था। बाल नाटक तो उसे क्या ही कहेंगे, बस वह बड़ों के नाटक का अपरिपक्व बाल्य रूपान्तरण भर था। यह खयाल आया और रात के ठीक ग्यारह बजकर उनसठ मिनट पर मेरी एंट्री जमा हुई।

हम चार रेज़िडेंट थे। दो हिन्दी एवं दो अँग्रेज़ी से। पहले दिन का सेशन

ऑस्ट्रेलिया के बाल नाटककार फिनेगन क्रुकमेयर ने लिया था। शैली सथ्यू सम्पूर्ण नाटक रेज़िडेंसी के दौरान हमारी मेन्टर रहीं। उनसे नाटक, खासकर बाल नाटकों को लेकर बहुत कुछ सीखने को मिला। पहले दिन फिनेगन क्रुकमेयर ने बहुत-से टास्क दिए थे जिसमें सबसे पहला था – बचपन की ऐसी चीज़ जो आपको सबसे अधिक याद आती हो, उसका चित्र बनाएँ। चाहे जैसा बनाएँ। वह चीज़ कुछ भी हो सकती है। बस, जो दिमाग में सबसे पहले कौंधे, उसे चित्रांकित करना है।

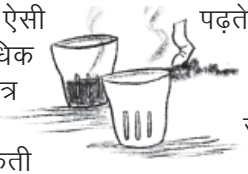

मैंने सबसे पहला चित्र साइकिल का बनाया। साइकिल मेरे बचपन का अभिन्न हिस्सा रही है क्योंकि आज़ादी का स्वाद मैंने साइकिल का हैंडल थामने के बाद ही चखा। दूसरा चित्र

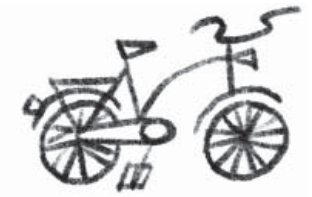

अरविंदो इंस्टीट्यूट का था। ऐसी जगह जहाँ नाटकों का प्रदर्शन होता था। प्रदर्शन से पूर्व कई दिनों तक अभ्यास चलते रहते थे। हॉल के एक कमरे में लाइब्रेरी बनी थी। रविवार की सूनी दोपहरी में हम कुछ बच्चे रंगों के साथ हॉल में उपस्थित रहते। यह कुछ अजीब था। अच्छा-सा अजीब... ऐसी जगह जहाँ रंग, किताबें और संवाद एक-साथ जुड़ते थे। खैर! पेंटिंग टीचर के इन्तज़ार के खाली समय में हम बच्चे उन अभ्यासरत कलाकारों को डायलॉग पढ़ते और बोलते सुना करते। बड़ा-सा मंच, मंच के नीचे हॉल में बिछी धूल सनी दरियाँ। दरियों पर बैठे नाटक पढ़ते कुछ लोग। बुझे सिगरेट के ठूँठ। राख, चाय की खाली प्यालियाँ। उनका संवादों का अभ्यास करना मंच पर संवाद बोलने से अलग था। जैसे वे पात्र के संवाद कहकर, पात्र को समझने की कोशिश कर रहे हों। हम बच्चों के लिए यह सब बहुत आकर्षक और रोचक था। कई बार पेंटिंग क्लास नहीं होने वाले दिन भी हम खिड़कियों की सलाखों से अन्दर झाँकते। उन्हें नाटक पढ़ते, संवाद के अभ्यास करते, सुधारते देर तक देखा करते।

फिनेगन के दिए अभ्यास पूरा करने के दौरान नाटक से सम्बन्धित मेरी सारी छोटी-छोटी स्मृतियाँ जो सुप्तावस्था में थीं, सहसा जाग उठीं। पहले सेशन का दूसरा टास्क स्मृतियों को किसी आकार में व्यवस्थित करना था... किन्हीं भी आकृतियों के रूप में।

तीसरा टास्क लिखने से सम्बन्धित था। उदाहरण के लिए, तुम मान लो कि जंगल में खो गई हो। सारे लोग तुम्हें ढूँढ़ रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि तुमने जंगल में घूमते हुए जगह-

जगह अपने निशान छोड़े हैं। कोई एक व्यक्ति निशानों के सहारे तुम्हें ढूँढ़ने निकल पड़ा है... - अब इस कहानी को यहाँ से आगे बढ़ाओ। ऐसी ही कुछ और गतिविधियाँ भी थीं। इसके पश्चात अगले सत्रों में नाटक पढ़ने, उन्हें समझने और फिर चरित्रों का खाका खींचने की बारी आई। शैली जो हमारी मेंटर थीं, उन्होंने तरतीबवार चीज़ों को समझाया। एक नाटक जो बच्चों के लिए लिखा जा रहा है, उसे किस प्रकार अधिक सम्प्रेषणीय बनाया जा सकता है। ऑडियन्स ग्राफ (नाटक आरम्भ होने से लेकर नाटक के अन्तिम दृश्य तक लेखक दर्शकों के मन या मस्तिष्क में जो विचार, भावनाएँ या प्रश्न लाना चाहते हैं), किरदारों का टकराव, चरित्रों का सामाजिक, शारीरिक तथा मानसिक चित्रण – ये सारे पायदान एक-एक कर चढ़ते हुए मुकम्मल नाटक तक पहुँचना था।

लिखने की समझ

नाटक लिखने से पहले समझ साफ करनी थी। इसके लिए कुछ प्रश्नों की शृंखला का अभ्यास था। उन प्रश्नों के उत्तर तलाशना दरसल बाल साहित्य, और उसमें भी बाल नाटक लिखने की ज़िम्मेदारी को समझने जैसा था। उदाहरण के तौर पर एक प्रश्न था - यह जो नाटक आप लिखने जा रही हैं, उसके माध्यम से क्या सवाल पूछना चाहती हैं? या दर्शकों को क्या सवाल पूछने के लिए उकसाना चाहती हैं? इस सवाल पर काफी मशक्कत करने के बाद मैंने जो लिखा, वह इस प्रकार था - मैं नाटक के माध्यम से दर्शकों को यह सवाल पूछने के लिए उकसाना चाहती हूँ कि (वे यदि वयस्क हैं) क्या उन्होंने अपने आसपास के बच्चों को यथोचित आज़ादी दी है? उनके निर्णय तथा विचारों का सम्मान किया है? क्या उन्हें बच्चों के प्रति अपने व्यवहार पर पुनर्विचार करने की ज़रूरत महसूस होती है? बाल दर्शकों से मैं यह पूछना चाहती हूँ कि वे अपनी बात कैसे रखते हैं? और जब उनकी बातें नहीं सुनी या समझी जातीं तब अपना पक्ष रखने के उनके क्या प्रयास होते हैं?

बातचीत के इसी क्रम में आगे एक विचार यह भी रहा कि कोई भी चीज़ जो हम बच्चों के लिए रचते हैं, कोशिश होनी चाहिए कि उससे कुछ स्टीरियोटाइप अवधारणाएँ टूटें। उदाहरण के तौर पर माँ का चरित्र रचते हुए यह ध्यान रखें कि लैंगिक असमानताएँ आखिरकार घर से ही शुरू होती हैं। यदि बच्चों के अनुभव में माओं की छवि एक स्वतंत्र, स्वावलम्बी, मज़बूत महिला की है, जो तय किए गए पारम्परिक मानकों में बँधी नहीं है, तब हमारा यानी लिखने वालों का काम बच्चे के साथ-साथ चलता है। पर, अपने अनुभव से मैंने

जाना है कि बहुत-से बच्चे (जहाँ अभी भी लैंगिक असमानताएँ चरम पर हैं) फिक्शन में भी इन बदलावों के प्रति सहज नहीं होते। रचनाओं को कई बार उनका हाथ पकड़कर थोड़ा खींचना पड़ता है। पर यह तय है कि बार-बार यदि ऐसी चीज़ें उनसे कही जाएँ, उनके सामने रखी जाएँ तो कुछ हद तक तो ये जकड़बन्दियाँ ढीली होती जाती हैं।

अक्सर कहा जाता है कि बड़ों के तर्क से बच्चों का साहित्य नहीं लिखा जा सकता। कुछ हद तक यह सही भी है। किन्तु एक सचेतन प्रयास तो होता है कि हम क्या लिख रहे हैं, और बच्चों तक क्या पहुँचा रहे हैं। बच्चों से अक्सर कहा जाता है कि बच्चे हो, बच्चे की तरह रहो। बड़ों की तरह मत बोलो। तथाकथित बड़ों की तरह बोलने से आप एकबारगी बच्चे को रोक भी दें, किन्तु उसे सोचने से कैसे रोक सकते हैं? यह बच्चों का एक अनूठा रहस्य है कि वे (अनुभव और मौखिक अभ्यास के क्षेत्र में) कहाँ-कहाँ से क्या लेकर आ जाते हैं। बेशक, उनके पास आप जैसी सुसंस्कृत शब्दों की मानसिक डिक्शनरी न हो, किन्तु उनके पास ऐसे ढेरों शब्द होते हैं जो आपके लिए भले ही अर्थहीन हों, बच्चे के लिए वे असंख्य अर्थों से भरे होते हैं।

जन्मजात अभिनय

मेरी तीन साल की बच्ची दीवार

पर आड़ी-तिरछी रेखाएँ खींचती है। मुझसे पूछती है, "ये क्या है?" मुझे वह बेतुका-सा लगता है, पर मैं जानती हूँ कि उसके लिए 'यह' कुछ है। मैं कहती हूँ, "तुम बताओ क्या है?" वह कहती है, "बाँ-बाँ शिप है।" फिर उसने कुछ नई ध्वनियाँ ईजाद कीं। मुझे अक्सर कहती, "ममा, पितकु-पितकु।" पहले-पहल मैंने इसे नज़रन्दाज़ किया। फिर उसे समझने की कोशिश में उसकी वे ध्वनियाँ मैंने दुहरा दीं।

वह बोली, "ममा, पितकु-पितकु!"

मैं – आ, पितकु-पितकु-पितकु।

बच्ची – डॉगी भाग गया।

मैं - कहाँ भाग गया भई!

बच्ची – चारवी को देखकर डर गया।

यह उसका पसन्दीदा संवाद है। वह इसके टोन एवं इसके लहज़े को हू-ब-हू याद रखती है। अक्सर मेरे व्यस्त रहने या आसपास न होने पर वह अकेली ही अपने और माँ के हिस्से के संवादों की भी अदायगी करती है।

दरअसल, बच्चों में ड्रामे-बाज़ी

जन्मजात होती है। यह हर बच्चे का पसन्दीदा शगल है। बच्चा रोता है। रोने पर अमूमन उसकी बात सुन ली जाती है। उसे बहलाने की कोशिश की जाती है। आगे जब कोई काम बच्चे के मन माफिक न हो पाए तब, रोना न आने की स्थिति में भी वह रोने का अभिनय करता है। उसकी आवाज़ का आरोह-अवरोह, चेहरे के भाव रोने का-सा माहौल बनाते हैं। यह पहली बार है जब वह बिना नाटक को जाने नाटक करता है। बड़ों की भूमिका बस इतनी है कि बच्चे के सहज स्वाभाविक कौशल का इस्तेमाल कर उसके अनुभव और संवेदना के दायरे को फैलाएँ। उसके व्यक्तित्व के स्वस्थ विकास हेतु इस कौशल का उपयोग एक संसाधन के रूप में बखूबी किया जा सकता है।

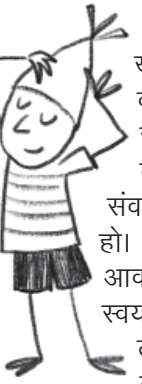

नाटक में जान डालते संवाद

आम तौर पर यह माना जाता है कि नाटक सामाजिक विधा है क्योंकि बच्चे ही नहीं, अभिभावक और अन्य सभी भी उसके दर्शक होते हैं। बिलकुल, नाटक एक सामाजिक विधा है किन्तु यह सिर्फ एक सामाजिक विधा ही नहीं है। नाटक जितना सामाजिक होता है, उतना एकान्तिक भी। एकान्त में पढ़ा जा रहा नाटक भी बच्चे को उतना ही समृद्ध कर सकता है जितना मंच पर खेला जा रहा नाटक करेगा। वस्तुतः नाटक संवादों में चल रही कहानी ही तो है। ऐसी कहानी जिसे बच्चा अकेले में संवादों को बोल-बोलकर पढ़ रहा हो। थोड़े मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है। फिर बच्चा स्वयमेव लहज़ा और सुर पकड़ लेता है। संवादों को बोल-बोलकर पढ़ते हुए वह कल्पना के मंच पर पहुँच जाता है। दृश्य उसकी कल्पना में सजीव हो उठते हैं।

मेरी अपनी स्मृति में काले जिल्द वाली इंटरमिडीएट की एक किताब है। दूसरी कक्षा में पढ़ने वाली बच्ची के हाथ ग्यारहवीं की हिन्दी की पाठ्यपुस्तक लगी थी। पुस्तक में दहेज प्रथा पर कोई नाटक था। नाटक तो याद नहीं, किन्तु नाटक की नायिका का एक संवाद हू-ब-हू याद रह गया, "नहीं पिताजी, मैं पढ़ना चाहती हूँ। अपने पैरों पर खड़ी होना चाहती हूँ।" बेशक आठ साल की बच्ची के लिए यह कुछ बोझिल था, किन्तु न समझने योग्य नहीं था। वह आनन्द जो उसे बोल-बोलकर पढ़ते हुए आया, जस-का-तस स्मृति में दर्ज हो गया।

नाटक पढ़ना, नाटक करने या नाटक देखने जितना ही मनोरंजक है। संवाद नाटक का प्राणतत्व है। बाल नाटकों में यह विशेष तौर पर ध्यान देने योग्य है कि संवाद छोटे

होने चाहिए। छोटे किन्तु रोचक, मज़ेदार। व्याकरण के गणित को फिलहाल के लिए किनारे रखकर संवादों की रचना करनी चाहिए। ऐसे संवाद जिनसे बात पूरी हो। वे बेढंगे-से भले हों, किन्तु ज़ुबान पर चढ़ जाने लायक हों। संवादों में इतनी गुंजायश होनी चाहिए कि बच्चे अपनी कल्पनाएँ, अपने शब्द, अपने मुहावरे उनमें जोड़ सकें। अमूमन तुकान्त और लयबद्ध संवाद बच्चों को जल्द आकर्षित करते हैं। ऊलजलूल शब्द और कविताएँ अक्सर नाटक को रोचक बनाते हैं।

नाटक को एक कहानी की भाँति पढ़ते हुए बच्चा, पाठक होता है और एकमात्र अभिनेता भी। अलग-अलग किरदारों के संवाद बोलते हुए भिन्न-भिन्न चरित्रों का आस्वाद उसकी संवेदना तक पहुँचता है। अपनी देह भाषा और अपने भावों को वह चरित्रों के अनुरूप ढालने की कोशिश करता है। ऐसे में नाटक के प्रत्येक पात्र से बच्चे की निजी तारतम्यता स्थापित होती है। यह प्रक्रिया बच्चे को निरपेक्ष भाव से चीज़ों को देखने, परखने व चिन्तन की ओर प्रवृत करती है। बच्चे का आत्मविश्वास बढ़ता है। किन्तु

एक लेखक के तौर पर नाटक लिखना, कहानी लिखने से बिलकुल भिन्न है। कहानी भूतकाल की स्थिति का वर्णन होती है, वहाँ सब कुछ 'था' होता है। वहीं नाटक में तत्काल घटित होता हुआ वर्तमान है। इसलिए वहाँ सारे संवाद और दृश्य 'हैं' में रचे जाते हैं।

मेरे लिए यह चुनौतीपूर्ण रहा। यह समझना कि कहानी लिखते वक्त मनचाही छूट लेने का अवसर नाटक में उपलब्ध नहीं है। वर्तमान को लिखते हुए, उसके परिवेश और किरदारों का मेल-जोल सहज बनाए रखना होता है। इस नाटक को लिखते हुए मैं एक लेखक और मनुष्य के तौर पर थोड़ी और समृद्ध हुई। नई चीज़ें सीखीं और कुछ भी नया सीखना (यदि वह आपकी रुचि का है तो) एक अद्‌भुत अनुभव है।

उपासना चौबे: कुछ वर्षों के अध्यापन के पश्चात अब स्वतंत्र लेखन करती हैं। उनके दो कहानी संग्रह, एक बाल उपन्यास तथा एक बाल नाटक की पुस्तकें प्रकाशित हुए हैं। 'भारतीय ज्ञानपीठ नवलेखन' पुरस्कार सहित दो अन्य प्रतिष्ठित सम्मान प्राप्त।

सभी चित्र: सौम्या मैनन: चित्रकार एवं एनिमेशन फिल्मकार। विभिन्न प्रकाशकों के साथ बच्चों की किताबों एवं पत्रिकाओं के लिए चित्र बनाए हैं। बच्चों के साथ काम करना पसन्द करती हैं।

किताब-कॉपी वाली परीक्षा

कालू राम शर्मा

"अरे, किताब-कॉपी लेकर जाना है परीक्षा में!" सुबह-सुबह केशव और डमरू एक-दूसरे से बहस कर रहे थे। डमरू कहने लगा, "मेरे बाबूजी ने तो साफ मना कर रखा है कि किताब नहीं ले जाने का। बोर्ड परीक्षा है। परीक्षा वाले पकड़ लेंगे।"

केशव आश्वस्त था, "अरे, मैंने बड़े भाई से पूछा था। वो बोला कि परीक्षा में किताब-कॉपी ले जाने की छूट है, कोई नहीं पकड़ने वाला।"

केशव के बड़े भाई ने *बाल विज्ञान* पढ़ रखा था। उसने केशव को बताया था कि इस परीक्षा में रटने वाले प्रश्न नहीं पूछे जाते, 'समझ' वाले प्रश्न पूछे जाते हैं। इसलिए केशव बड़े आत्मविश्वास से बता रहा था, "परीक्षा में किताब में से एक भी सवाल नहीं आता।"

"तो फिर परीक्षा कैसी होती होगी?" डमरू मचलकर बोला।

"अरे, *बाल विज्ञान* की परीक्षा में घबराना मत। देख... अपन प्रेक्टिकल तो अच्छा ही देंगे।" केशव खुद भी घबरा रहा था मगर उसने डमरू के कन्धे पर हाथ रखते हुए सान्त्वना दी।

"तो तू स्कूल जाए तो मेरी अर्ज़ी दे देना।" केशव ने जेब में से अर्ज़ी निकालकर डमरू को थमाते हुए कहा।

"मैं भी स्कूल नहीं जा रहा आज। बाबूजी कह रहे थे कि गाँव में मज़दूर मिल नहीं रहे हैं। खेत में चने कट रहे हैं। मुझे भी खेत पे जाना है।" डमरू ने अर्ज़ी लौटाते हुए कहा।

ठण्ड के मौसम की विदाई हो

चुकी थी। घरों के अन्दर ठण्डक का एहसास होता तो बाहर धूप थोड़ी ही देर में तपन का एहसास कराती। ठण्ड और गर्मी की लुका-छिपी का खेल जारी था। पलाश में दहकते अँगारों जैसे फूल आना शुरू हो चुके थे। स्कूल के पीछे पलाश का सूखा-छितरा-सा पेड़ पूरे शबाब पर था। बिन पत्तों की ठूँठ जैसी शाखाएँ फूलों से लद चुकी थीं। चटक अँगारे के माफिक फूल तरह-तरह की चिड़ियाओं और कीटों को लुभा रहे थे। इधर होली की धींगा मस्ती भी शुरू हो चुकी थी। और उधर रबी की फसलों की कटाई का काम युद्ध-स्तर पर प्रारम्भ हो चुका था।

वहीं स्कूल में...

फसलों की कटाई की वजह से स्कूल में बच्चों की उपस्थिति में काफी कमी आ चुकी थी। मास्साब सोच रहे थे कि बच्चों की तैयारी करवा दी जाए ताकि वे बेहतर प्रदर्शन कर सकें। परन्तु आठवीं कक्षा में आज कुल चार बच्चे ही आए थे; चन्दू, नारंगी, रघु और विष्णु और वे सब मैदान में खड़े होकर गपिया रहे थे।

मास्साब ने बच्चों को बाहर खड़े देखकर आवाज़ लगाई, "ऐ..."

विष्णु बोला, "मास्साब, छुट्टी दे दो। गणित की पढ़ाई करनी है घर पर।"

मास्साब ने चलते हुए कहा, "कोई छुट्टी-वुट्टी नहीं मिलेगी। घर पर तो जैसे पूरा गणित कर लेगा।"

"नी-नी... सच में, गणित का काम छूट गया है।" विष्णु मास्साब का पीछा कर कहता जा रहा था।

मास्साब ने पलटकर कहा, "अच्छा, पहले कक्षा में आओ फिर बात करेंगे।" कक्षा खाली थी। चारों बच्चे कक्षा में बेमन से बैठे थे। वे समझ रहे थे कि आज कुछ खास होने वाला नहीं है, इसलिए घर जाने को उतावले हो रहे थे।

मास्साब कक्षा में आकर बोले,

"चलो, कुछ परीक्षा की बात कर लेते हैं।" वे सोच रहे थे कि अगर वे इन चारों बच्चों के साथ कुछ सार्थक बात करेंगे तो ये बाकी के उन बच्चों के साथ शाम-सबेरे बात तो करेंगे ही कि स्कूल में काम की बात हो रही है। और हो सकता है कि फिर वे बच्चे भी स्कूल आने लगें।

मास्साब बड़े आशावादी दिखाई दे रहे थे। उनके मूड को समझकर विष्णु ने एक बार फिर कहा, "मास्साब... मैं जाऊँ?"

मास्साब ने पूछा, "अच्छा ये बताओ कि क्या काम है तुम्हें?"

विष्णु के पास कोई जवाब नहीं था। दरअसल, वह गणित और सामाजिक अध्ययन से परेशान था। उसे कुछ समझ नहीं आ रहा था। हालाँकि सभी बच्चों का यही हाल था। बच्चे बोर्ड की परीक्षा से आतंकित थे।

"ऐसा है कि अपन को प्रेक्टिकल परीक्षा करनी है... तो ये बाकी के छोरे कब तक आ जाएँगे? ऐसा करो, कल सबको कहना कि स्कूल आ जाएँ।" मास्साब कहते-कहते *बाल विज्ञान* की तीनों किताबों को ध्यान से उलट-पलटकर देख रहे थे।

आईएमपी

"हाँ तो... मैं कह रहा था कि बोर्ड से घबराना बन्द कर दो। इससे डरने की बजाय इसको डराना शुरू कर दो। *बाल विज्ञान* में जो भी तुमने प्रयोग और परिभ्रमण से सीखा है, उस सब को एक बार अच्छे-से समझ लो।" मास्साब बच्चों को ढाढ़स बँधा रहे थे।

विष्णु हिम्मत करके धीरे-से बोला, "मास्साब, आईएमपी बता दो। हम याद कर लेंगे।"

"क्या कहा? विज्ञान में रटने का नहीं है! ये आईएमपी क्या बला है? कहाँ से सीख लिया तुमने ये सब? तुम लोगों ने जो करके सीखा है वही आएगा पेपर में।"

मास्साब चिन्तित हो गए कि आखिर इन बच्चों को भी इस आईएमपी की हवा ने चपेट में ले ही लिया। वे मज़ाकिया अन्दाज़ में बोलने लगे, "तो आईएमपी तो तुमको गाइड और गेस-पेपर में से मिल गए होंगे... क्यों रे, तुम विज्ञान की गाइड पढ़ते हो? अरे, सोचो तो सही कि उसमें मिलेगा क्या तुम लोगों को।" मास्साब ने सोचा कि इन्हें *बाल*

विज्ञान के मूलभूत पहलुओं की ओर मोड़ना होगा।

नारंगी, चन्दू और रघु को कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि मास्साब और विष्णु के बीच क्या बात हो रही है।

"एक बात समझ लो तुम - रट्टा बिलकुल मत मारना। और हाँ, गाइड और गेस-पेपर के सवालों के जवाब बिलकुल मत लिखना। जो तुमने समझा है, उसी आधार पर जवाब लिखना।" मास्साब की बातों को बच्चे ध्यान से सुन रहे थे। "एक बात और बता दूँ - क्लास में जो कराया और पढ़ाया है और जो तुमने अपनी कॉपी में लिखा है, उसको एक बार ज़रूर देख लेना।"

रघु को मास्साब की बात याद थी, "मास्साब, आपने बताया था कि छठी और सातवीं की किताब में से भी सवाल पूछेंगे।"

"हाँ, अच्छा याद दिलाया। छठी और सातवीं के कुछ अध्यायों में से ज़रूर सवाल पूछे जाएँगे। मैं इन पाठों की लिस्ट बनवा देता हूँ... ऐसा करो, सबको कल स्कूल आने का बोल दो। फिर परीक्षा की तैयारी कैसे करना है, अपन इस पर बात करेंगे।"

बीती कक्षाओं से सवाल क्यों?

दरअसल, कई सालों तक तो मास्साब समेत कई शिक्षकों के गले यह बात नहीं उतरी थी कि आखिर पिछली कक्षाओं का कोर्स क्यों पूछा जा रहा है। इस पर शिक्षक आए दिन स्रोत सदस्यों के सामने इस समस्या को रखते। इसके पीछे तर्क यह दिया गया था कि अगर एक बार उन मूलभूत कौशलों को समझ लिया जाए तो फिर वे बच्चों के ज़हन में अच्छे से उतर जाते हैं। और ये सब कौशल एवं अवधारणाएँ ऐसी हैं जो विभिन्न विषयों में बार-बार काम आती हैं। मसलन, दूरी नापना, घट-बढ़, अल्पतम नाप, ग्राफ बनाना सीखना, आयतन, क्षेत्रफल आदि के कौशल अगर पिछली कक्षाओं में अच्छे से सीख-समझ लिए गए हैं, तो फिर आँकड़े किताब से बाहर के ही क्यों न दिए जाएँ, बच्चे उन्हें हल कर सकते हैं।

इसी प्रकार से समूहीकरण एक मूलभूत अवधारणा है। अगर समूह बनाने का हुनर बच्चों ने आत्मसात कर लिया तो वे दुनिया की किन्हीं भी चीज़ों के समूह बनाकर उनके गुणधर्म चुन सकते हैं। समूहीकरण एक ऐसी अवधारणा है जो विज्ञान का आधार बनाती है। उच्च कक्षाओं और जीवन में भी समूहीकरण की अवधारणा महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। वर्गीकरण भी तो एक प्रकार का समूहीकरण ही है। इसी प्रकार विज्ञान की मूलभूत प्रक्रिया में प्रयोगों में तुलना का प्रावधान, तालिका बनाना व उसे पढ़कर समझना, स्तम्भालेख बनाना तथा पढ़ना व पढ़कर निष्कर्ष

निकालना शामिल हैं। उल्लेखनीय है कि स्थानीयता को *बाल विज्ञान* में काफी तवज्जो दी गई है, और इसलिए स्थानीय स्रोतों से उपकरण बनाने की क्षमता को जाँचना भी प्रायोगिक परीक्षा में शामिल किया गया था।

परीक्षा की तैयारी

अगले दिन अधिकांश बच्चे स्कूल में आ चुके थे। बच्चे उतावले मगर सहज थे कि आज मास्साब उन्हें कुछ बताने वाले हैं।

कक्षा में प्रवेश कर मास्साब ने परीक्षा की तैयारी करवाने का काम शुरू किया। "पहले तो, परीक्षा के भूत को मन से निकाल दो। मैं कुछ सवालों के नमूने आप लोगों को हल करने को दूँगा। फिर तुम समझने की कोशिश करना कि परीक्षा कैसे होती है। वैसे, तुम्हारी परीक्षा वैसी ही होगी जैसी पिछली कक्षाओं में हुई थी। याद है न? तुमको टू-इन-वन पेपर दिया था। वैसा ही पेपर आएगा। बस थोड़ा बड़ा ज़रूर होगा।"

"मास्साब, पेपर में ही जवाब लिखना होगा?" नारंगी ने पूछा। मास्साब ने 'हाँ' में सिर हिलाया। फिर उन्होंने बच्चों को पिछली बोर्ड परीक्षा के प्रश्न-पत्र की कुछ प्रतियाँ दे दीं ताकि उन्हें कुछ आइडिया मिले। "तो चलो, हम कुछ प्रश्न हल करने की कोशिश करते हैं।"

मास्साब ने बोर्ड पर मापन का प्रश्न लिख पैमाने का चित्र बनाया। अब बच्चों से कहा कि इस प्रश्न को हल करें। मास्साब ने ज़ोर देकर कहा कि वे अपनी किताब का इस्तेमाल कर सकते हैं।

बच्चे प्रश्न को हल करने की कोशिश में जुट गए। प्रश्न सरल-सा ही था। पैमाने से मापन के प्रश्न के पाँच उपखण्ड थे। मास्साब ने बोर्ड पर लिखे प्रश्न को पढ़ते हुए पूछना शुरू किया। बच्चे सटीक जवाब दे पा रहे थे। अब मास्साब ने कहा, "तुमने जो भी जवाब दिए हैं, उनको लिख लो।" बच्चे लिखने की कोशिश कर रहे थे। और मास्साब भली-भाँति समझ रहे थे कि उन्हें असल दिक्कत आ रही है लिखने की।

मास्साब ने फिर से सबका ध्यान अपनी ओर खींचा, "देखो, तुम अपनी समझ से, अपनी ही भाषा में लिखो। इसकी मनाही नहीं है।"

"तो अब पैमाने की बातें समझ में आ गईं न?" मास्साब बच्चों में उत्पन्न हो रहे आत्मविश्वास के जज़्बे को पढ़ रहे थे। "पैमाने के बारे में अगर तुम लोगों को पता है और किसी चीज़ को मापना अगर आता है, तो किसी भी तरह का सवाल तुम हल कर सकोगे, ये मेरा दावा है।"

'बोर्ड' परीक्षा – एक मज़ाक?

कक्षा का माहौल अब बदला-बदला-सा लग रहा था। बच्चे कहने लगे, "अब दूसरा सवाल दो।" मास्साब

एक अन्य सवाल बोर्ड पर लिख रहे थे कि चन्दर को कुछ खुसर-फुसुर करते हुए मास्साब ने पकड़ लिया, "क्यों भई, कोई खास बात है जो अपने दोस्तों से कर रहे हो?"

रघु बोल पड़ा, "मास्साब, यह कह रहा है कि बोर्ड की परीक्षा 'बोर्ड' पर होगी।"

रघु के मुँह से यह सुनकर मास्साब हँसी के मारे लोट-पोट हो गए। वे बोले, "सही कहा! वैसे, बोर्ड का मतलब है कि पेपर कहीं और से आते हैं। पाँचवीं में भी तुम्हारी बोर्ड की परीक्षा हुई थी। बोर्ड की परीक्षा में पेपर बाहर से आते हैं और कॉपी भी बाहर जँचती है। हालाँकि बोर्ड की परीक्षा को लेकर यह हकीकत एक चुटकुला बन चुकी है। इसमें नकल करने-कराने जैसे कई अनैतिक पहलू जुड़ चुके हैं। बोर्ड की परीक्षा में परीक्षा हॉल में बोर्ड पर प्रश्नों के जवाब लिख दिए जाते हैं, और वही जवाब बच्चे अपनी उत्तर-पुस्तिकाओं में लिख लेते हैं। इसीलिए इसका दूसरा अर्थ 'बोर्ड' की परीक्षा अर्थात् बोर्ड पर परीक्षा हो गया।"

बच्चों को यह सबकुछ समझ में नहीं आ रहा था। वे तो परीक्षा नामक भूत से भयभीत थे। हालाँकि मास्साब भी परीक्षा से उतने ही परेशान थे जितना कि बच्चे। वे बच्चों को परीक्षा रूपी भूत से डटकर सामना करने का हौसला दिलाने का भरसक प्रयत्न कर रहे थे।

मास्साब सोच रहे थे कि परीक्षा का अर्थ हो चला है, शिक्षक पर शक करना। फिर शिक्षक बच्चों पर शक करता है। और यह शक करने की परम्परा पनपती रहती है।

कुछ अभ्यास

उधर देश भर के अधिकांश पढ़ने-लिखने वाले बच्चों के घरों में परीक्षा ने आतंक मचा रखा था, मगर होशंगाबाद विज्ञान का अध्ययन कर रहे बच्चों को कम-से-कम *बाल विज्ञान* की परीक्षा ने राहत की साँस दिलाई थी।

कक्षा में बच्चों को और भी प्रश्नों के नमूने हल करने को दिए जा रहे थे। एक प्रश्न जो बच्चों को अमूमन हल करने को ज़रूर दिया जाता रहा है, वही मास्साब ने बोर्ड पर लिखा। इस प्रश्न की तासीर कुछ इस प्रकार

मास्साब ने तालिका बनाकर बोर्ड पर लिखा था:

नीचे बनी तालिका में चार पदार्थों के बारे में कुछ जानकारी दी गई है:

पदार्थ	पानी में घुलता है?	ऊर्ध्वपातन होता है?
नौसादर	हाँ	हाँ
कपूर	नहीं	हाँ
नमक	हाँ	नहीं
रेत	नहीं	नहीं

की है जिससे बच्चों के तालिका पढ़ने और उसके निष्कर्ष निकालने के हुनर की जाँच होती है।

(क) कपूर और नौसादर के मिश्रण में से दोनों पदार्थ अलग-अलग कैसे प्राप्त करोगे?

(ख) कपूर, नौसादर, नमक और रेत के मिश्रण में से चारों पदार्थ अलग-अलग कैसे प्राप्त करोगे?

बच्चों को जब यह प्रश्न दिया तो उनके चेहरे पर खुशी झलक रही थी। ऐसा लगा कि इसे तो वे हल कर ही लेंगे। वैसे बच्चे 'चीज़ों को अलग-अलग करना' नामक अध्याय में इससे सम्बन्धित प्रयोग भी कर चुके थे। प्रश्न में जो चीज़ें दी गई थीं, वे बच्चों के परिवेश की ही थीं। बच्चे विभिन्न पदार्थों की घुलनशीलता व ऊर्ध्वपातन सम्बन्धी गुणों को प्रयोगों के माध्यम से समझ चुके थे। इस जानकारी के आधार पर बच्चों से अपेक्षा की जा रही थी कि वे तार्किक प्रक्रिया के द्वारा खुद सोचकर बताएँ कि मिश्रण में से पदार्थों को अलग-अलग कैसे करेंगे। इस प्रश्न में गौण रूप से पृथक्करण की विधियों की, और प्रमुख रूप से तार्किक विवेचन की जाँच की जा रही थी। यदि कोई बच्चा पृथक्करण की विधियों को आंशिक रूप से भूल भी गया होगा तो भी यदि उसने ये प्रयोग किए हैं तो केवल तार्किक प्रक्रिया से इस प्रश्न का जवाब दे सकता है।

बच्चों ने इस प्रश्न को आसानी-से हल कर लिया।

मास्साब के अब तक के अनुभवों में सबसे बड़ी चिन्ता थी ग्राफ को लेकर। दरअसल, बच्चे ग्राफ को पढ़ तो लेते थे मगर ग्राफ बनाने का हुनर आत्मसात नहीं कर पा रहे थे। इसकी एक वजह यह हो सकती है कि गणित में बच्चे बेहद कमज़ोर थे। ग्राफ

के आँकड़ों को बच्चे दोनों अक्षों पर सही तौर पर रख तो पाते थे मगर पैमाना चुनने में काफी दिक्कत होती। हालाँकि, *बाल विज्ञान* के सम्बन्धित अध्याय को विकसित करने के दौरान भी इस समस्या को पहचानते हुए विशेष ध्यान दिया गया था।

मास्साब ने आँकड़े देकर उन्हें ग्राफ बनाने का अभ्यास दिया था। कक्षा के कुछ बच्चे ही इस हुनर में पारंगत हो पाए थे। अधिकांश बच्चे पैमाना चुनने का आत्मविश्वास अर्जित नहीं कर पाए थे। अतः मास्साब ग्राफ बनाने के अभ्यास बारम्बार करवाने की भरसक कोशिश कर रहे थे।

प्रायोगिक परीक्षा का खास ढंग

परीक्षा नज़दीक आती जा रही थी। प्रायोगिक परीक्षा की चिन्ता बच्चों को कतई नहीं थी। जो प्रयोग उन्होंने किए थे उनमें से, या उन जैसे ही प्रयोग पूछे जाने वाले थे। प्रायोगिक परीक्षा का आयोजन स्थानीय स्तर पर स्कूल में पढ़ाने वाले शिक्षक एवं अनुवर्तनकर्ता (या, सुगमकर्ता) को मिलकर करना था। संगम केन्द्र पर आयोजित मासिक बैठक में समस्त स्कूलों की प्रायोगिक परीक्षा का कार्यक्रम तैयार किया जा चुका था। लिखित परीक्षा के ठीक एक हफ्ते पहले प्रायोगिक परीक्षा का आयोजन किया जाना तय हुआ था।

निर्धारित तिथि पर परीक्षक स्कूल आ पहुँचे थे। प्रावधान यह किया गया था कि प्रायोगिक परीक्षा में एक प्रशिक्षित शिक्षक, जिसे परीक्षक कहा जाता था, उपस्थित रहेंगे।

बच्चों की मदद से मास्साब ने प्रायोगिक परीक्षा में लगने वाली सामग्री पूर्व में ही एकत्र करवा ली थी, जिसकी सूची एक सप्ताह पहले स्कूल को भेज दी गई थी।

स्कूल के बरामदे में कक्षा आठवीं के बच्चों की प्रायोगिक परीक्षा की बैठक व्यवस्था की गई। इसमें सहायता के लिए छठी और सातवीं के कुछ बच्चों को बुला लिया गया था। आठवीं के बच्चों को कक्षा में बैठने को कहा गया। मास्साब व बाहर से आए परीक्षक ने पेपर का लिफाफा खोला और उसको पढ़ा। पर्चे को पढ़कर प्रयोगों के सेट जमाने का सिलसिला शुरू हुआ।

प्रायोगिक परीक्षा के पर्चे में से कुल जमा पाँच प्रयोग पूछे जाने का प्रावधान था। पहला प्रयोग मापन, दूसरा पर्यावरण के प्रति सजगता, तीसरा रसायन, चौथा वैज्ञानिक प्रक्रियाएँ, पाँचवाँ सामान्य अवधारणाएँ एवं छठा विशेष। पहले तीन प्रयोग आवश्यक थे। शेष प्रयोगों में से परीक्षक को किन्हीं भी दो को चुनने की आज़ादी थी।

परीक्षक की सहायता से बरामदे में प्रयोग के सेट तैयार किए जा चुके थे। कुल जमा पाँच प्रयोग सेट किए गए थे। एक बार में पच्चीस बच्चों की

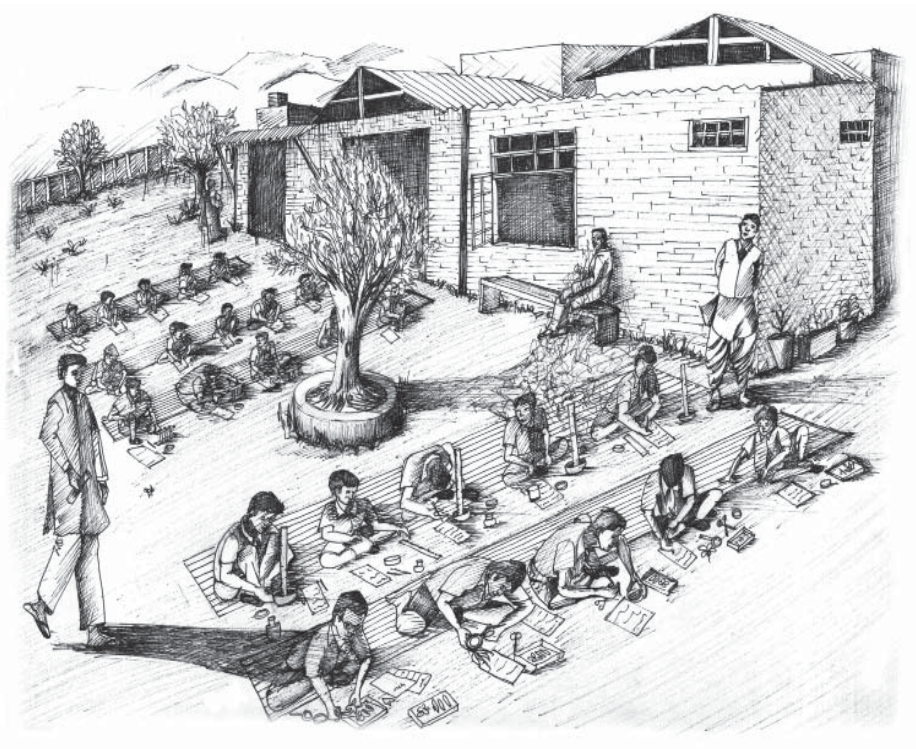

परीक्षा के लिहाज़ से प्रत्येक प्रयोग के पाँच-पाँच सेट बनाए थे। फर्श पर प्रयोग का क्रमांक चॉक से लिख दिया गया। प्रत्येक प्रयोग के लिए 15 मिनट का समय निर्धारित किया गया। समय और प्रयोग के स्वरूप को लेकर प्रायोगिक परीक्षा में लचीलेपन का रुख अपनाया जाता रहा है। अगर किसी बच्चे को 15 मिनट से ज़्यादा वक्त लगे तो उसे अतिरिक्त समय उपलब्ध करा दिए जाने के उदाहरण भी सुनने को मिलते हैं। इसी प्रकार से प्रयोगों की तासीर में काफी खुलापन होता। अगर फूल को खोलने का प्रयोग रखा जाता तो स्थानीय स्तर पर जो भी सामान्य फूल मिल जाए, उसे शामिल कर लिया जाता।

कई स्कूलों में किट के अभाव से निजात पाने के अनेक रास्ते निकाले गए थे। अगर पास की स्कूल में किट सामग्री है तो वहाँ से उधार ले ली जाती, जो प्रायोगिक परीक्षा के उपरान्त लौटा दी जाती। मास्साब ने इस बारी संगम केन्द्र के अन्य स्कूलों से किट के तराजुओं की व्यवस्था की थी। दरअसल, किट में प्रति स्कूल

एक कक्षा के लिए एक तराजू का प्रावधान था। संगम केन्द्र के चार अन्य स्कूलों से चार तराजू और बाट के सेट की व्यवस्था मास्साब ने पहले से ही कर ली थी।

प्रयोग शुरू

बच्चे बड़े सहज दिखाई दे रहे थे। मास्साब को भी विश्वास था कि बच्चे बढ़िया काम करेंगे। प्रायोगिक परीक्षा प्रारम्भ हो चुकी थी। परीक्षक ने प्रायोगिक परीक्षा के पर्चे को बोर्ड पर लिख दिया था और बच्चों को सम्बन्धित निर्देश दिए जा रहे थे।

परीक्षक ने बच्चों से बड़े रोचक अन्दाज़ में कहा, "प्रायोगिक परीक्षा तुम्हारे लिए नई चीज़ नहीं है, है न! तुमने छठी-सातवीं में भी प्रायोगिक परीक्षा दी है। इसलिए डरने और घबराने की बिलकुल ज़रूरत नहीं है।"

बच्चों को परीक्षक की बात अच्छी लगी और सभी ने सिर हिलाकर जवाब दिया।

अब मास्साब कुछ बता रहे थे, "जो बच्चा जहाँ पर प्रयोग कर रहा है, उसको अपना प्रयोग करके दूसरे प्रयोग पर आना होगा। हरेक प्रयोग के लिए 15 मिनट का समय है। इसके बाद अगले प्रयोग पर जाना होगा।"

बच्चे प्रयोग हल करने में मशगूल हो गए। जब घण्टी बजती और प्रयोग पूरा हो जाता तो बच्चे अगले प्रयोग पर चले जाते। इस प्रकार पाँचवें प्रयोग पर बैठा छात्र चौथे पर, चौथे वाला तीसरे पर... और पहले प्रयोग पर बैठा छात्र पाँचवें पर आ पहुँचता। तीसरा प्रयोग रसायन शास्त्र की कुशलता जाँचने का था। परीक्षक तीसरे प्रयोग पर अपनी नज़रें गड़ाए हुए थे। वे बच्चों से कुछ मौखिक सवाल-जवाब भी करते दिख रहे थे।

परीक्षा सम्पन्न हो जाने पर मास्साब ने बच्चों की मदद से प्रयोग वगैरह का सामान एकत्र करवाकर साफ-सफाई की, और फिर बच्चों को कहा कि वे अब जा सकते हैं।

कक्षा आठवीं बोर्ड की प्रायोगिक परीक्षा की उत्तर पुस्तिकाओं को जाँचने का कार्य परीक्षक ने परीक्षा स्थल पर ही प्रारम्भ कर दिया था। परीक्षक ने बच्चों के प्रयोग करने के कौशल और उनसे सम्बन्धित सवालों के जवाबों का विवरण एक कागज़ में अलग से लिख रखा था। उत्तर पुस्तिकाओं को जाँचकर तथा बच्चों की प्रयोग करने की काबिलियत के आधार पर अंकसूची तैयार कर प्रायोगिक परीक्षा का भविष्य लिफाफे में सीलबन्द कर दिया गया था। प्रायोगिक परीक्षा पूरी करवाकर परीक्षक ने सीलबन्द लिफाफा संगम केन्द्र पर जमा कर दिया।

जैसी शिक्षा, वैसी परीक्षा

बच्चों ने प्रायोगिक परीक्षा से हँसते-खेलते मुक्ति पा ली थी। अब

उन्हें लिखित परीक्षा का सामना करना था। *बाल विज्ञान* की परीक्षा से वे बहुत-ज़्यादा घबराए हुए नहीं थे।

सुबह-सुबह का वक्त बड़ा सुहाना था। हल्के-से बादल छा चुके थे। बादलों के बीच में से सूरज अपनी किरणें बिखेर रहा था। धूप कभी तेज़ होती तो कभी मद्धिम। वातावरण में खुशनुमा ठण्डक थी। मगर बच्चों के दिमाग में गर्माहट थी।

घण्टी बजते ही सभी बच्चे परीक्षा के कमरे में प्रवेश कर गए। बच्चों के हाथ में *बाल विज्ञान* की पुस्तकें भी मौजूद थीं।

दरअसल, *बाल विज्ञान* की लिखित परीक्षा में तीनों सालों की किताबें और नोटबुक ले जाने की छूट थी। इसके पीछे समझ यह थी कि बच्चों से रटी हुई जानकारियाँ और तथ्य वगैरह नहीं पूछे जाएँगे, बल्कि उन्होंने क्या समझा और आत्मसात किया है, उसकी जाँच होगी। बच्चों ने विभिन्न प्रयोगों और परिभ्रमण के दौरान जो अवलोकन और निष्कर्ष निकालने के हुनर सीखे हैं, उन्हें विभिन्न परिस्थितियों में आज़माने की जाँच होगी। इस लिहाज़ से किसी प्रश्न में किसी विशेष जानकारी या किसी नियम आदि की आवश्यकता हो तो परीक्षा में किताब व नोटबुक में से देखा जा सकता था। इसके पीछे सोच यह थी कि इससे रटने पर रोक लगेगी और परीक्षा का तनाव भी कम होगा। और दरअसल ऐसा हुआ भी!

परीक्षा की इस प्रक्रिया ने कुंजी, गेस-पेपर्स और गाइडों को कठघरे में खड़ा कर दिया था। हालाँकि, बाज़ार में ये सब उपलब्ध थे और बिक भी रहे थे। कई बार तो अभिभावक अपने बच्चों की चिन्ता करके उनसे बिना पूछे ये सब खरीदकर दे देते थे। हालाँकि, परीक्षा में इनसे कोई मदद नहीं मिलती थी।

खुली किताब परीक्षा या यूँ कहें कि 'जैसी शिक्षा वैसी परीक्षा' के चलते शिक्षक समुदाय के सामने प्रश्न-पत्र निर्माण का कार्य खासी चुनौती भरा होता था। होशंगाबाद विज्ञान के माध्यम से खुली किताब परीक्षा की अवधारणा को स्वीकारना अपने आप में एक ऐतिहासिक कदम था। होशंगाबाद विज्ञान के दस्तावेज़ में साफ तौर पर लिखा था कि परीक्षा में परिभाषाएँ, नियम आदि नहीं पूछे जाएँगे। इस वजह से शिक्षकों को ऐसे प्रश्न बनाना होते थे जो किताब से सीधे-सीधे न उठाए गए हों मगर उनमें निहित अवधारणाओं पर आधारित हों।

तूने क्या लिखा?

बच्चों का कारवाँ *बाल विज्ञान* की परीक्षा देकर स्कूल से निकल पड़ा था। बच्चों के चेहरों पर खुशी झलक रही थी। वे आपस में बातें करते हुए जा रहे थे।

"अरे, वो फसल वाले में तूने क्या लिखा?"

डमरू ने कहा, "एक तो चना और दूसरा मूँगफली लिखा।"

"अरे, मैंने तो मूँग और चँवला लिखा।"

"मैंने उड़द और सोयाबीन लिखा।"

"अच्छा, ये बता कि चित-पट वाले में क्या लिखा?"

"मैंने तो पट लिखा। और तूने?"

"मैंने तो चित लिखा।"

"अच्छा, अपन नम्बर तो नहीं जोड़ सकते कि कितने आएँगे।"

"हाँ, पेपर में नम्बर लिखे ही नहीं थे।"

"पता नहीं ऐसा क्यों करते हैं!"

"बाकी पेपर में तो नम्बर होते हैं।"

दरअसल, *बाल विज्ञान* में कुछ प्रश्न खुले जवाबों वाले ज़रूर होते। जब पूछा गया कि द्विबीजपत्री फसलों के नाम बताओ तो बच्चे इतने सक्षम हो चुके थे कि वे अपनी मर्ज़ी से नाम चुनते और जवाब लिखते। इसी प्रकार जब संयोग और सम्भाविता की अवधारणा को लेकर पूछा गया कि सिक्के को उछालें तो अगली बारी में चित आएगा या पट, तो इसके दोनों ही जवाब – चित और पट – सही हो सकते हैं। हालाँकि, इस प्रकार के प्रश्न में अगर बच्चे की समझ नहीं बनी और उसने अन्दाज़ से भी लिख दिया तो जवाब के अंक मिल जाते। मगर ऐसा बहुत ही कम होता था।

अंक पुनर्निर्धारण की प्रक्रिया

परीक्षा के बाद की बहुत-सी प्रक्रियाओं से बच्चे बेखबर थे। आगे की प्रक्रिया होविशिका बिरादरी के शिक्षकों के द्वारा सम्पन्न की जाती। होविशिका में प्रश्न-पत्रों को जाँचने के पहले एक लम्बी प्रक्रिया से गुज़रना होता था। इस प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण हिस्सा था, अंकों का पुनर्निर्धारण। अंकों के पुनर्निर्धारण का एक पहलू था, बच्चों ने जो जवाब उत्तर-पुस्तिकाओं में लिखे हैं उनकी समीक्षा करना, और दूसरा, समीक्षा के आधार पर नए मूल्यांकन निर्देश तैयार कर जाँचना।

कितनी भी कुशलता और सावधानी से प्रश्न बनाए जाएँ, उनमें खामियाँ हो सकती हैं व सुधार की गुंजाइश बनी रहती है। साथ ही, प्रश्न-पत्र को जिस ढंग से बच्चे हल करते हैं, वह भी प्रश्न-पत्र पर एक टिप्पणी है। यदि समीक्षा की इस प्रक्रिया को ज़्यादा सतर्कता और बारीकी-से किया जाए तो यह पाठ्यक्रम व शिक्षण पद्धति के सुधार का एक उम्दा आधार बन सकती है।

अंक पुनर्निर्धारण प्रक्रिया को अपनाने से कई सारी बातों का पता चलता। एक तो यह कि हो सकता है, प्रश्न-पत्र में प्रश्नों की भाषा और चित्रों की वजह से बच्चे प्रश्न को ठीक उसी तरह से न समझ सकें

जिस रूप में प्रश्न-पत्र निर्माता की अपेक्षा थी। ऐसे में बच्चों के जवाब अपेक्षित उत्तरों से भिन्न भी हो सकते हैं। आम परीक्षाओं में इन सभी 'भिन्न' जवाबों को गलत मानकर मूल्यांकन किया जाता है। कभी यह नहीं सोचा जाता कि हो सकता है कि प्रश्न के स्वरूप के आधार पर वे 'भिन्न' जवाब भी तार्किक हों। अगर ऐसा है तो इन्हें भी सही की श्रेणी में शामिल किया जाना चाहिए।

दूसरी प्रमुख बात यह थी कि किसी प्रश्न का स्तर अगर अत्यन्त कठिन है और किसी भी बच्चे ने उसे हल नहीं किया हो, या इतना सरल हो कि सभी बच्चों ने उसे हल कर लिया हो, तो इन दोनों परिस्थितियों में समस्या है। ऐसे में वह प्रश्न बच्चों की सापेक्ष कुशलता को जाँचने के लायक नहीं है। अतः ऐसे प्रश्नों का वज़न (आनुपातिक महत्व) कम करते हुए उन प्रश्नों का वज़न बढ़ाया जाता जो सापेक्ष अन्तर को बखूबी उभारते हों।

यह प्रक्रिया एक सांख्यिकीय विधि के आधार पर की जाती। इसके लिए बच्चों की उत्तर-पुस्तिकाओं को रैंडम विधि से छाँटा जाता और उन्हें जाँचा जाता। यह प्रक्रिया थोड़ी पेचीदा और उबाऊ ज़रूर थी, मगर थी अत्यन्त महत्वपूर्ण।

आदर्श और प्रतिरोध

होविशिका में परीक्षा का जो आदर्श स्वरूप तय किया गया था, वह शिक्षा जगत में जड़ जमा चुके कर्मकाण्डों तथा भय व शक के चलते सही रूप में परिलक्षित नहीं हो पा रहा था। आखिर पास-फेल के खाँचों में बच्चों को बाँट ही दिया जाता था। मगर होविशिका उन कर्मकाण्डों, भय व शक की जड़ों को कमज़ोर करने में कुछ हद तक कामयाब ज़रूर हो पाया था।

कालू राम शर्मा (1961-2021): अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, खरगोन में कार्यरत थे। स्कूली शिक्षा पर निरन्तर लेखन किया। फोटोग्राफी में दिलचस्पी। *एकलव्य* के शुरुआती दौर में धार एवं उज्जैन के केन्द्रों को स्थापित करने एवं मालवा में विज्ञान शिक्षण को फैलाने में अहम भूमिका निभाई।

सभी चित्र: योगेश्वरी: स्वतंत्र रूप से चित्रकारी करती हैं। साथ ही, म्यूरल और पोर्ट्रेट भी बनाती हैं। शारदा उकील स्कूल ऑफ आर्ट से कला में डिप्लोमा। वर्तमान में, अम्बेडकर यूनिवर्सिटी, दिल्ली से विज़ुअल आर्ट्स में स्नातकोत्तर कर रही हैं।

वापसी

सतीश बलराम अग्निहोत्री

हरि भला ऐसे मुवक्किल को कैसे छोड़तीं, यह केस तो ऐतिहासिक हो जाएगा। शोहरत... शोहरत की पूरी गारंटी! वैसे भी उन्हें और दौलत में खास दिलचस्पी नहीं थी, दौलत तो ढेरों कमा ली थी। शैलायन की बातों को उन्होंने गौर से सुना, उनके तर्कों में वज़न था। ओलम्पिक टीम में कोई भी नागरिक भाग ले सकता है और वे अभी भी भारतीय नागरिक थे, बैंक का खाता था जहाँ से वे दस्तखत कर पैसे निकालते थे, राशन कार्ड पर बाकायदा उनका नाम था, राशन मिलता भी था, न उनकी नागरिकता किसी ने रद्द की थी न वोटर लिस्ट से उनका नाम कटा था।

"यह मुद्दा मुझ पर छोड़ दें प्रोफेसर, आपका केस मेरे ज़िम्मे। पर प्रश्न यह है कि मामला उठाया कहाँ से जाए। क्या ओलम्पिक एसोसिएशन ने आपको कोई लिखित मनाही भेजी है?"

"नहीं, लिखित तो प्राधिकरण ने भी नहीं भेजा। वैसे मैं उन्हें लिख रहा हूँ कि वे मना करने की वजह बताएँ।" शैलायन ने कहा।

"वह तो आप कर ही डालें पर हमारे हाथ किसी तरह एसोसिएशन के कागज़ात लग जाएँ..."

"लेकिन वह तो गोपनीय..."

"सरकार में कुछ भी गोपनीय नहीं होता प्रोफेसर, ये आप मुझ पर छोड़ दें।" हरि जी ने बाईं आँख दबाते हुए बात खत्म की।

शैलायन को विदा करने के बाद उन्होंने कुछ देर इस विषय पर सोचा। ओलम्पिक एसोसिएशन का पत्र हथियाने का एक ही रास्ता था 'धमाका'। *दैनिक धमाका* अपनी खोजी पत्रकारिता के लिए प्रसिद्ध था, खासकर जब से उसके सम्पादक श्री राकेश पुरी ने काम सम्भाला था। उसकी यह साख और भी बढ़ गई थी, सत्ता पक्ष उनसे काफी आतंकित रहता। न जाने कब किस मंत्री, कब किस अधिकारी को धोबी पछाड़ दे मारे। कहा जाता था कि उन्होंने अपने बेडरूम में शिकार किए गए व्यक्तियों के फोटो टांग रखे थे।

एडवोकेट हरि से जब पुरी ने मामला सुना, उनकी आँखों में चमक आ गई। यार, यह तो स्कूप है! पूरा स्कूप! अब तू देखती जा। हाँ! उस पत्र को हथियाकर क्यों अपना व्यवसायिक ईमान बिगाड़ेगी। अखबार से ही कॉपी ले लेना।" आनन-फानन में उन्होंने अपने चेलों को काम पर लगा दिया।

पर इस स्कूप में और भी कई सम्भावनाएँ थीं जिन्होंने राकेश पुरी की ललक और बढ़ा दी थी। विपक्ष इस मामले को अगर राष्ट्रीय स्तर पर उछाल दे? वह भी युवा संगठनों के ज़रिए? अरे वाह! उन्होंने खुद की पीठ थपथपा डाली। राष्ट्रीय अस्मिता, खेल-कूद और युवा चेतना - धाँसू कॉम्बिनेशन है! अगर तीर लग गया तो बस पौ बारह, और नहीं भी लगा तो स्कूप का तुक्का हाथ से कहीं नहीं जाना। योजना सावधानी से बनानी होगी, आज के अखबार में स्कूप, फिर तीन दिन विभिन्न संगठनों के बयान, दो पहले से लिखे लेख, सरकार की संवेदनहीनता और निष्क्रियता पर टीका, चौथे दिन से मोर्चे - बस मार दिया पापड़ वाले को! खेल मंत्री भी परसों से एक सप्ताह के दौरे पर विदेश में होंगे। परसों तो नहीं, चौथे रोज़ तक मसाला ज़रूर तैयार हो जाएगा।

"ता ऊपर सुल्तान है, मत चूको चौहान..." कुल मिलाकर राकेश पुरी जी ने अविनाश कुमार को यही सन्देश दिया था। अविनाश कुमार, जो उभरते हुए युवा नेता के रूप में विपक्ष में ख्याति पा चुके थे, उनकी संगठन क्षमता और पैनी बुद्धि को पहले ही परखकर राकेश पुरी जी उन्हें विश्वविद्यालय से ही ले उड़े थे। अविनाश ने इस मुद्दे की अहमियत को तुरन्त पहचान लिया था। यह मौका हाथ से जाने नहीं देना था। इसमें चित भी मेरी, पट भी मेरी। अगर सरकार मान जाए तो क्रेडिट मिलेगा, न मानी तो आन्दोलन का मुद्दा मिलेगा। उन्होंने राकेश पुरी जी को आश्वस्त किया और काम में जुट गए। समय बहुत कम था।

* * *

पर कहते हैं न 'तेरे मन कछु और है, कर्ता के कछु और'। कर्ता ने इस बार कुछ और ही सोचा था। निमित्त बने

थे खुफिया विभाग के आर.आर. उर्फ डैडी पाटिल। डैडी पाटिल को शायद ही किसी ने हँसते देखा होगा। हद-से-हद वे मुस्करा देते थे। उनके चेहरे पर सपाट भाव स्थाई रूप से मौजूद रहता था। पर उसी सपाट चेहरे के पीछे उनकी अनगिनत सफलताएँ छिपी थीं। अपने काम में वे धीमे पर काफी गहरे थे। और छोटे-से-छोटे मुद्दे को वे अनदेखा नहीं करते थे। इसी विशेषता ने उनके लिए सफलता के नए आयाम खोल दिए। हालाँकि, इसी विशेषता का उनके दोस्त लोग मज़ाक उड़ाया करते थे।

अविनाश कुमार को उन्होंने कब से नज़र में रखा था। "सर उभर जाने के बाद आदमी कई नकाबों में छिप जाता है, टोह तभी से लेनी चाहिए जब वह उभर रहा हो।" इस नसीहत पर न जाने कितने नौजवान सरों ने मुँह बिचकाया हो पर पाटिल का यही दर्शन था।

और यह दर्शन आज फल लाया था। पाटिल अपने सामने रखे अज्ञात लोगों की बातचीत के टेप को घूर रहे थे। मामला कुछ था ज़रूर, महत्वपूर्ण भी और तत्काल ध्यान देने जैसा। पर पूरी बात उनकी समझ में आ नहीं रही थी। उन्होंने फिर से टेप ऑन किया।

"हाँ-हाँ, हर काम एकदम तेज़ी-से होना चाहिए, घड़ी के काँटे जैसा! स्कूप के दूसरे ही दिन अखबारों में हमारे बयान आ जाने चाहिए! प्रोफेसर के पक्ष में चौथे दिन विरोध प्रदर्शन की घोषणा, अगले दिन पाँचों महानगरों में जुलूस। हाँ, ट्रेक-सूट जुलूस का आइडिया बहुत ही अच्छा रहेगा! कुछ नहीं तो राजधानी में तो इन्तज़ाम हो ही जाएगा। माँग खेल मंत्री के बयान की ही रहेगी, सचिव वगैरह कुछ नहीं यार। मंत्री! और वे तो होंगे विदेश में।" एक हल्के-से कहकहे की आवाज़।

"जब तक वे वापस आएँगे, चिड़िया खेत चुग गई होगी। अरे, प्रोफेसर के इशू पर सारी जनता की सहानुभूति हम लोगों के साथ रहेगी, देख लेना। अरे, मीडिया कवरेज की फिक्र मत करो। धमाका हो जाएगा। तो फिर शाम को मिलते हैं।"

कुछ तो मामला ज़रूर था। पाटिल सोच में पड़ गए। देशव्यापी मुद्दा है पर यह प्रोफेसर कौन है जिसे हर कोई जानता है और सहानुभूति... क्या खेल संस्थान किसी प्रोफेसर को सस्पेंड कर रहा है? यदि नहीं तो खेल मंत्री का बयान क्यों?

खेल से सम्बन्धित सेक्शन ने टका-सा जवाब दिया, "कहीं किसी कार्यवाही की सूचना नहीं है और प्रोफेसर तो कोई है नहीं।" पाटिल उधेड़बुन में पड़े रहे। ऊपर खबर देना इस समय ठीक नहीं था, जब तक कुछ और विवरण हाथ में नहीं आ जाए। पर विवरण मिले कहाँ से? वे धान के ढेर में सुई तलाशने में जुट गए, पर कायदे से।

मलाई बाबू से मिलने जब वे गए तब तक उनके पास अविनाश कुमार और राकेश पुरी की आठ घण्टे की गुप्त बैठक की खबर आ चुकी थी। महानगरों के लिए अविनाश कुमार किन दूतों को विमान और रेल से भेज रहे थे, यह भी उन्हें पता चल चुका था। खेल से सम्बन्धित सभी संस्थाओं में फैले सभी सम्भावित स्कैंडलों का जायज़ा वे ले चुके थे। पर ऐसा कोई मुद्दा उन्हें नज़र नहीं आ रहा था जिसमें किसी प्रोफेसर के खिलाफ कार्यवाही हो रही हो, वह भी ऐसे मसले पर जिसे देशव्यापी मुद्दा बनाया जा सके, वह भी 'धमाकेदार'।

मलाई बाबू ऐसी किसी कार्यवाही का अता-पता न दे सके, क्योंकि डैडी पाटिल ने उन्हें किसी भी पदाधिकारी के विरुद्ध होने वाली कार्यवाही के बारे में पूछा था। आखिर श्री पाटिल ने सीधा प्रश्न कर डाला, "क्या आपके किसी पदाधिकारी को प्रोफेसर कहकर पुकारा जाता है, ऐसा जो काफी प्रसिद्ध हो?"

"प्रसिद्ध पदाधिकारी, प्रोफेसर..." मलाई बाबू के पल्ले बात नहीं पड़ी।

"जी हाँ, दरअसल मैं पता लगाना चाह रहा था कि किसी प्रसिद्ध प्रोफेसर के नाम से जाने जाते हुए व्यक्ति के खिलाफ ऐसी कार्यवाही तो नहीं हो रही जिसमें खेल मंत्री को हस्तक्षेप करना पड़े?"

"एक मिनट, एक मिनट!" मलाई बाबू चौकन्ने हो गए, "आप का मतलब खेल मंत्री के हस्तक्षेप से... शैलायन

के मामले की बात तो नहीं कर रहे आप?"

"शैलायन? वह जो..."

"हाँ-हाँ वही, बन्दर बने हुए! पर कार्यवाही तो उनके खिलाफ नहीं हुई है। ठहरिए, मैं बताता हूँ आपको..."

पहेली का हल लिए डैडी पाटिल चीफ के कमरे में घुसे। सारी बातें सुनने के बाद चीफ भी गम्भीर हो गए। लेकिन *धमाका* तक बात पहुँचाई किसने? कहीं शैलायन ने तो नहीं? उन्होंने शैलायन की गतिविधियों का विवरण मँगाया।

"लेकिन पाटिल, तुमने यह बातचीत टेप... ऊपर क्या रिपोर्ट जाएगी?"

"सर, महज़ इत्तेफाक!" पाटिल मुस्कराए, "क्रॉस कनेक्शन लग गया था, सो मैंने टेप कर लिया। आप तो जानते ही हैं, सर, मैं कानून का कितना पाबन्द हूँ।"

दो और दो चार होते देर नहीं लगी। शैलायन हरि से मिलने गए थे, हरि ने ज़रूर राकेश पुरी से मदद माँगी होगी, एसोसिएशन के पत्र के बारे में... बेचारे शैलायन, उस दिन जो लताड़ पड़ी थी उन्हें, आज भी याद है। भला हो श्री थेजा अंगामी का जिन्होंने अन्त में बात को रोक लिया था। "हमें आपके इरादों पर शक नहीं है, प्रोफेसर। पर समझदारी ज़रूरी है। हरि की बजाय मुझसे मिल लेते तो शायद यह बवण्डर न उठता।"

बवण्डर कोई खास उठा नहीं। हाँ, *धमाके* ने एसोसिएशन के नकार की खबर मय फोटो कॉपी के छापी। पर उसी दिन शाम की दूरदर्शन और आकाशवाणी की खबरों में यह खुलासा निकल चुका था कि प्राधिकरण इस मामले को खेल विभाग तक उठा चुका है। यही नहीं, उसने एसोसिएशन को भी अपनी मनाही पर पुनर्विचार करने की सिफारिश की है। सरकार इस मुद्दे के सारे पहलुओं से वाकिफ है, पर वह भारतीय ओलम्पिक एसोसिएशन के काम में बेवजह दखल नहीं देना चाहती। खबरों में इस बात पर भी खेद व्यक्त किया गया कि एक प्रसिद्ध राष्ट्रीय दैनिक ने पूरे तथ्यों का पता लगाए बिना मामले को सनसनीखेज़ रूप से उठाने की कोशिश की।

मलाई बाबू का विनम्र टेलीफोन अविनाश कुमार को उनकी नियत प्रेस कॉन्फ्रेंस से एक घण्टे पहले ही मिल गया। मलाई बाबू ने उनसे समय माँगा था कि मॉस्को जाने वाले युवा अध्ययनदल में उनके योगदान के बारे में बात हो सके और जब चर्चा की गई तो मलाई बाबू ने प्राधिकरण का पक्ष स्पष्ट कर डाला और बड़ी ही मुलायम आवाज़ में कहा, "अविनाश बाबू, सब आप जैसे मूल्यों पर आधारित नीति के पक्षधर थोड़े ही हैं। *धमाका* को ही देखिए, कितने पूर्वाग्रह हैं उनके मन में हमारे प्रति। अरे, एक बार पूछ तो लिया होता राकेश जी ने हमसे।"

राकेश पुरी को आज भी विश्वास है कि उनके प्रेस की बिजली की सप्लाई से दो घण्टे छेड़-छाड़ जानबूझकर की गई थी ताकि टीवी की खबरों और अविनाश कुमार की अस्वस्थता के कारण रद्द हुई प्रेस कॉन्फ्रेंस, दोनों को वे नज़रअन्दाज़ न कर सकें। बिजली बोर्ड आज भी इस आरोप को निराधार ही बताता है।

राजा रिपुदमन सिंह को काफी सफलता से समझा दिया गया था कि शैलायन के केस की अन्तर्राष्ट्रीय ओलम्पिक कमेटी को सिफारिश करना, कैसे उनकी एसोसिएशन के और देश के हित में है। मन मसोसकर ही सही, वे इस बात के लिए तैयार हो गए थे। उनके सचिव ने उन्हें सही सलाह भी दी थी। "साहब, मनाही अगर मिलनी ही है, तो अं.ओ.क. से मिले – हमारा क्या लेना-देना है। और फिर मेडल मिलने पर कुछ वाहवाही तो हमारी भी होगी!"

* * *

कुल मिलाकर गेन्द को अन्तर्राष्ट्रीय कमेटी के कोर्ट में पहुँचा दिया गया था। शैलायन का भारतीय टीम में चयन अब एक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दा बन गया था। आईओसी की पहली प्रतिक्रिया नकारात्मक ही रही, हालाँकि उनके अध्यक्ष ने अन्तिम फैसला देने से इनकार कर दिया। उनकी भूमिका थी 'वेट एण्ड वॉच'। 'वेट एण्ड वॉच' के लिए कई अन्य लोग तैयार नहीं थे। एफ्रो-एशियाई देशों ने इस बात को प्रतिष्ठा का मुद्दा बना लिया। खाटू में एक विशेष बैठक बुलाई गई जिसमें इन देशों ने चेतावनी दी कि आईओसी प्रोफेसर शैलायन के चयन को मंज़ूरी दे।

खेलकूद की दुनिया की सुपर पावर्स ने भी प्रचार माध्यमों के ज़रिए मौलिक मुद्दे उठाए। उनमें से मुख्य था अनुचित लाभ का। शैलायन को बन्दर का बदन मिल जाने से, उन्हें उनके प्रतियोगियों पर अनुचित बढ़त मिल गई थी। इसका जवाबी हमला यह कहकर किया गया कि जो देश मानव-निर्मित अनुचित लाभों जैसे एस्ट्रो-टर्फ, उन्नत प्रशिक्षण जिसमें संसाधनों पर खुलकर खर्च होता है, वगैरह के बारे में चुप्पी साध जाते हैं, उन्हें प्रकृति प्रदत्त लाभ के बारे में कुछ कहने का अधिकार नहीं है। शैलायन के प्रयोग को भी एक ऐसा ही प्रशिक्षण कार्यक्रम माना जाए जैसा धनी देशों में अत्याधुनिक कंप्यूटरों के सहारे होता है। क्या आज तक किसी धनी देश ने कंप्यूटर विश्लेषण के सहारे गरीब देशों के चैंपियन बनने लायक बच्चों की प्रतिभा को खोजने में मदद की है?

एक अमीर शेख ने तो यहाँ तक पेशकश की कि ऐसा ही प्रयोग उनकी पूरी वॉलीबॉल टीम पर करें या अन्य खिलाड़ियों पर करें ताकि अगले ओलम्पिक में इन महासत्ताओं के नुमाइन्दों को धूल चटा दी जाए। इन सारी सरगर्मियों में हरि ने धमकी दी

कि वे इस मामले को अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय तक ले जाएँगी, देश-विदेश के अखबारों में उनके लेख छपे कि कानूनी तौर पर शैलायन का खेलों में भाग लेना कैसे ज़रूरी है। राबिया जमाल की शोहरत भी बुलन्दी पर थी। कैसे उन्होंने शैलायन को कोच किया, उनका प्रदर्शन कैसा था, उनका रिकॉर्ड कैसा रहा। विडियो कैसेट पर उनका और शैलायन का कॉपीराइट हो गया। एक-एक फोटो के वे कसकर दाम वसूला करते और विवाद का भूखा समाचार जगत उसे हाथों-हाथ उठा लेता।

उन्नत देशों ने भी मोर्चाबन्दी की क्योंकि उनके कोचों ने जब शैलायन के प्रदर्शनों के आँकड़े और फोटो देखे तो वे सर पीटकर रह गए। शैलायन के हाथों दर्जनभर मैडल तो ज़रूर आने थे – दौड़ में, कूद में, जिमनास्टिक में और न जाने किस-किस विधा में।

यह लगभग तय था कि इस मुद्दे पर ओलम्पिक गतिविधि दो खण्डों में बँटेगी, विकसित देश एक ओर और विकासशील देश एक ओर। गुप्त मंत्रणाओं के दौर चले, समझौतों के प्रयास हुए, अन्त में निर्णय हुआ कि एथेंस में एक आपात बैठक बुलाई जाए और वह भी संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में।

* * *

यह सब होते हुए भी मेघना के साथ शाम के एक-डेढ़ घण्टे गुज़ारने के शैलायन के कार्यक्रम में कोई ढील नहीं पड़ी, और अब तो उसकी परीक्षाएँ भी सर पर आ चुकी थीं। उस दिन श्यामली भी उन दोनों के पास ही बैठी हुई थी। शैलायन फिज़िक्स का प्रश्न हल करने में मेघना की मदद कर रहे थे।

"देखो, गोला छूटने से तोप पीछे की ओर खिसक आती है। अब गोले का वज़न और गति, इन दोनों को गुणा करने से जो राशि होगी, वही तोप के वज़न और गति को गुणा करने से मिलेगी। अब तुम्हें तीन चीज़ें मालूम हैं – गोले का वज़न, गति और तोप का वज़न – बस, तोप की पीछे हटने की गति निकाल लो।"

"पर पापा, ऐसा होता क्यों है?"

"बताया तो बेटे, कई चीज़ें अनश्वर मानी जाती हैं जैसे ऊर्जा, वैसे ही मोमेंटम यानी संवेग।"

"वही जो भार और गति को गुणा करने से मिलता है?"

"बिलकुल ठीक! अब देखो, चलने से पहले तो तोप अपनी जगह पर थी और गोला अपनी, यानी संवेग शून्य। अब जैसे ही गोला आगे की ओर छूटा, उतना ही संवेग पीछे भी मिलना चाहिए, सो तोप पीछे खिसकी।"

"पर पापा, कई गन तो ऐसी होती हैं जिनमें गोली आगे छूटती है पर बन्दूक पीछे नहीं आती!"

"हाँ बेटे, वह है स्थिर यानी रेकॉइललेस गन। उसमें क्या होता है,

परिवेश उसके पीछे की ओर दिए गए धक्के को अपने में सोख लेता है या सह लेता है।"

"पापा, ऐसा और भी चीज़ों में होता है?"

"'और' यानी और विषयों में?"

"हाँ पापा, जैसे केमिस्ट्री, बायोलॉजी..."

"बेटे, ये अनश्वरता के सिद्धान्त हर जगह लागू होते हैं पर ऐसी अनश्वर मात्राएँ काफी कम होती हैं।"

"पापा, मुझे लग रहा था जैसे आपका दिमाग एकदम तेज़ हो गया, तो क्या उसकी वजह से तो आपका बदन ऐसा नहीं हुआ?"

"ऐसा कैसा?"

"जैसे धक्का लग के पीछे चला गया हो। उस दिन हमारी बायोलॉजी की किताब में तो था - आदमी, उसके पीछे गोरिल्ला, उसके पीछे चिम्पैंज़ी, उसके पीछे ओरांगुटान।"

शैलायन मेघना को एक-टक देखते रह गए थे... क्या सचमुच उत्क्रान्ति में ऐसा होता है? जैसे-जैसे मस्तिष्क का विकास होता है, शरीर... नहीं, लेकिन शरीर तो विकास ही करता है!

उन्होंने अपने आपको देर रात तक लाइब्रेरी में बन्द कर लिया था। श्यामली को उन्होंने अपने ही पास बुला लिया था। "श्यामू, शायद मेघना के मुँह से ही मेरी गुत्थी का समाधान निकला है।"

"वह कैसे?"

"देखो, मैं सोच रहा था कि अगर उसकी बात सही है तो जैसे-जैसे मस्तिष्क का मेधा के स्तर पर विकास होता जाएगा, शरीर का विकास पिछड़ना चाहिए पर आम जीवन में तो ऐसा नज़र नहीं आता। चिम्पैंज़ी के मस्तिष्क और शरीर की अपेक्षा मानव का मस्तिष्क और शरीर, दोनों ही उन्नत हैं। पर मेरे केस में देखो, वाकई जब मस्तिष्क मेधा के स्तर पर एक छलाँग आगे लगा गया, तो शरीर एक छलाँग पीछे लगा गया।"

"यानी तुम कहना चाहते हो कि धीमी नैसर्गिक उत्क्रान्ति की तुलना रेकॉइललेस गन से की जा सकती है, जिसमें मस्तिष्क तो आगे की ओर बढ़ता है, साथ ही शरीर का भी क्रमिक विकास होता रहता है और परिवेश उसे पीछे हटने नहीं देता। पर तुम्हारे प्रयोग में, चूँकि तुम लोगों ने धीमी नैसर्गिक उत्क्रान्ति की बजाय मस्तिष्क के स्तर पर एक त्वरित लम्बी छलाँग आगे की ओर लगा दी है, तुम्हारा शरीर एक पग पीछे की ओर चला गया।" श्यामली ने कहा।

"हाँ, तुम्हारा अनुमान सही है, और इसके कई मायने निकलते हैं। जैसे यह कि अगर मैं शरीर के स्तर पर एक छलाँग आगे की ओर लगा देता तो मेरा दिमाग शायद चिम्पैंज़ी जैसा हो जाता।"

श्यामली के बदन में झुरझुरी-सी दौड़ गई। भगवान का शुक्र है, ऐसा नहीं हुआ। शैलायन अपनी रौ में कहते गए – "इसका एक और निहितार्थ यह है कि अगर मैं मेधा के स्तर पर एक और छलाँग आगे लगा दूँ तो मेरा शरीर उसी अनुपात में और अधिक पीछे की ओर..."

"खाक पीछे की ओर!" इतने दिनों की व्यथा श्यामली के मुँह से निकल ही पड़ी। "अरे, यह निहितार्थ तुम्हारी समझ में क्यों नहीं आता कि अपनी पुरानी मेधा के स्तर पर छलाँग लगाकर वापस आ जाओ तो तुम्हारा शरीर अपने पुराने रूप में वापस आ जाएगा और तुम पहले जैसे हो जाओगे। यह भी तो सम्भव है! कभी-कभार तो अपना या कम-से-कम अपनों का ख्याल कर लिया करो!"

* * *

श्यामली से आगे चर्चा करने में शैलायन को खास मतलब नहीं दिखा। वह नहीं समझेगी वैज्ञानिक गवेषणा के रोमांच को। वापस पहले जैसी स्थिति में आने में क्या धरा है? पर अगर एक और कदम पीछे जा पाएँ और कहे के मुताबिक अगर प्रयोग सफल हो जाए तो कितनी क्रान्तिकारी खोज होगी। लेकिन प्रकट में उन्होंने प्रतिवाद नहीं किया और श्यामली की बात को मान लिया। अध्यात्मानन्द जी परसों आने वाले थे। उनके साथ इस नए विचार पर बहस करना ज़रूरी था। पता नहीं, उन्हें इस परिस्थिति की जानकारी थी या नहीं। अखबार

तो उन्होंने सालभर नहीं पढ़ा होगा और रास्ते में भी कोई उनसे इस बात पर शायद ही चर्चा करे। खबर पुरानी हो गई है, क्यों न उन्हें एक आश्चर्य का झटका दिया जाए? विचार बुरा नहीं है।

खुदाबख्श को शैलायन ने सख्त हिदायतें दीं कि अध्यात्मानन्द जी को एयरपोर्ट से सीधा उनके आश्रम लाना है और इस परिवर्तन के बारे में उनसे ज़रा भी बात नहीं करनी है। स्वामी जी को पहले से पता हो और वह खुद पूछें तो बात दूसरी है। फिर उन्हें बता दें कि शैलायन आश्रम में उनका इन्तज़ार कर रहे हैं। खुदाबख्श ने सहमति में गर्दन हिलाई। थोड़े-से खेल में हर्ज़ क्या है?

पर खेल तो तब चौपट होता नज़र आया जब खुदाबख्श को दर्शक दीर्घा में श्यामली किसी के इन्तज़ार में खड़ी दिखी। 'स्वामी जी से मिलने आई होंगी क्योंकि उनके अन्य कोई मेहमान तो आने वाले नहीं थे'। अब शैलायन को भी फोन करने का क्या मतलब। खुदाबख्श ने एक ठण्डी साँस खींची और उड़ान उतरने की प्रतीक्षा करने लगे।

श्यामली वाकई स्वामी जी की प्रतीक्षा में थी। उसने भी शैलायन से आगे बहस करने की व्यर्थता को महसूस किया था और शैलायन के ऊपरी तौर पर उनसे सहमत होने के झाँसे में वह नहीं आई। उसके विचार से यह शोध का चक्कर बहुत हो चुका था और अब बेहतर था कि अध्यात्मानन्द जी शैलायन को पुराने रूप में लाने की चेष्टा करते।

श्यामली को अपनी प्रतीक्षा में खड़े पाकर अध्यात्मानन्द जी को आश्चर्य हुआ। श्यामली उन्हें पास के ही होटल में ले गई और उन्हें विस्तार से सारी बातें बताईं। रुँधे गले से उसने स्वामी जी से अनुरोध किया कि वह शैलायन को मस्तिष्क की उत्क्रान्ति के अगले सोपानों पर न ले जाएँ।

"मैं तो उनके ओलम्पिक तमाशे को भी नहीं चाहती। जानते हैं, कैसा बवाल खड़ा हो गया है? अगले गुरुवार को ही एथेंस में बैठक है, इस विषय पर।" ओलम्पिक की बात पर स्वामी जी ठहाका लगाकर हँस पड़े। श्यामली को उन्होंने समझाया कि वह निराश न हो, यह भी बताया कि उन्हें अपने प्रयोग के ऐसे परिणाम की उम्मीद नहीं थी और वे देखेंगे कि इस बारे में क्या किया जा सकता है।

श्यामली से मिलने के बाद जब वे आश्रम पहुँचे तो उन्होंने शैलायन को अपनी प्रतीक्षा में पाया। शैलायन को देखकर वे एक क्षण अवाक-से रह गए। किसी के बन्दरनुमा हो जाने की बात सुनना और उसे वाकई बन्दर-रूप में देखना, दो अलग-अलग बातें थीं। उन्हें अवाक देख शैलायन को विश्वास हो गया कि स्वामी जी को इस परिवर्तन के बारे में कुछ मालूम नहीं था। अध्यात्मानन्द जी उनकी इस धारणा को बदलने के लिए

उत्सुक नहीं थे। वैसे भी श्यामली ने खुदाबख्श से निवेदन किया था कि वे शैलायन को उनके हवाईअड्डे जाने और स्वामी जी से मिलने के बारे में कुछ न बताएँ। दो पार्टियों के बीच फँसे बेचारे खुदाबख्श ने यही तय किया कि वे चुप्पी साध जाएँ।

अध्यात्मानन्द जी को वही सारी बातें एक बार और विस्तार से सुननी पड़ी, पर शैलायन के नज़रिए से। उनका नया सिद्धान्त, उसे जाँचने की उनकी उत्सुकता, यह सब देखकर एक मुस्कान स्वामी जी के चेहरे पर दौड़ गई। एक ही वास्तविकता का दो अलग नज़रियों से विवरण कितना अलग हो सकता है। विस्तृत चर्चा और विचारों के आदान-प्रदान के बाद यही तय हुआ था कि मंगलवार को अगला प्रयोग किया जाएगा जिसमें शैलायन के सिद्धान्त के सत्यापन के लिए कदम उठाए जाएँगे।

"पर मैं शरीर में बहुत पीछे छलाँग नहीं लगाना चाहता, स्वामी जी।" शैलायन ने कहा था क्योंकि ओलम्पिक का भी मामला है। "ओलम्पिक खत्म हो जाने के बाद हम लोग स्वतंत्र हो जाएँगे, चाहे जितने आगे जाएँ या पीछे।"

* * *

स्वामी जी के मन में उमड़ते-घुमड़ते विचारों का पता न शैलायन को था, न श्यामली को। उन्हें भी करीब-करीब उसी किस्म की लताड़ अपने गुरुओं से सुननी पड़ी थी जैसी शैलायन को थेजा अंगामी के कमरे में सुननी पड़ी थी। सुदूर हिमालय के एकान्तवास में जब बेचारे अध्यात्मानन्द जी ने अपने प्रयोगों का ज़िक्र किया तो उनके गुरुओं ने बड़ी ही रुखाई से इस खबर का स्वागत किया था। फिर उस रुखाई के बाद उनसे पूछा गया था कि क्या उन्हें एहसास है कि वे कैसी खुराफात कर चुके हैं। यह भी कि क्या उन्हें यह पल्ले नहीं पड़ा कि प्रकृति में उत्क्रान्ति की धीमी गति का अपना एक तर्कशास्त्र है, अपनी एक संगति है – उन्हें इस चक्र में हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं। जहाँ तक अतिमानव का सवाल है, उसके लिए सही परिवेश तैयार नहीं हुआ है, और फिर मामला पूरी मानव जाति की उत्क्रान्ति का है, एक-दो मानवों का नहीं।

उसी सख्ती को जारी रखते हुए उन्हें फरमाया गया था कि वापस जाने के बाद पहला काम वे यह करें कि शैलायन को अपने पुराने रूप में ले आएँ। जहाँ तक शैलायन के शरीर का सवाल था, उसे वे खुद वापस जाकर देख लें। वापस आकर अध्यात्मानन्द जी ने जो देखा, वह उनके लिए काफी विस्मय की बात ज़रूर थी। उन्होंने तय किया कि वे अब आदेश के मुताबिक अपना काम करेंगे। जहाँ तक ओलम्पिक का सवाल था, उनके विचार से शैलायन अनावश्यक रास्ते पर भटक गए थे।

ओलम्पिक में देश के द्वारा बेहतर प्रदर्शन का यह कतई रास्ता नहीं है और ऐसे शॉर्ट-कट देश का कोई भला नहीं करते। इससे बेहतर यही है कि समाज के उपेक्षित वर्गों में पनपती और परवान चढ़ी प्रतिभा को खोजकर, उसे उचित प्रशिक्षण और प्रोत्साहन दिया जाए।

नियत दिन शैलायन और अध्यात्मानन्द फिर एक बार प्रयोगशाला में बैठे। प्रयोग के परिणाम का इन्तज़ार तीनों को था पर अलग-अलग सन्दर्भों में। श्यामली सशंकित, शैलायन उत्सुक और स्वामी जी शान्त थे।

आज शैलायन रात दो बजे तक घर नहीं लौटे। वे प्रयोगशाला में ही बैठे अपने शरीर में होने वाले परिवर्तनों का निरीक्षण करने को आतुर थे। पिछली बार तो किसी को अनुमान ही नहीं था कि ऐसा कोई परिवर्तन होगा, सो यह निरीक्षण हो ही नहीं पाया था। बस, आँख लगी और सुबह उठे तो आदमी के शरीर से बदलकर बन्दर का शरीर! परिवर्तन क्रमिक था या दशा यानी फेज़ परिवर्तन की भाँति हठात, इसका उत्तर दोनों प्रयोगकर्ताओं में से किसी के पास नहीं था।

प्रयोगशाला के सोफे पर बैठे-बैठे उन्हें एहसास ही नहीं हुआ कि कब उनकी आँख लग चुकी थी। अध्यात्मानन्द जी ने उन्हें जगाए रखने का कोई प्रयत्न नहीं किया। वे तो दरअसल उस नींद को गहरा कर रहे थे। सोफे पर लेटे शैलायन को अपलक निहार रहे थे। उनके शरीर में अन्दरूनी परिवर्तन क्या हो रहे थे, और न ही बाहरी बदलावों को जानने की कोई उत्सुकता स्वामी जी ने दिखाई। पर यह तो उन्होंने अपनी आँखों से देखा कि कैसे शैलायन का सारा शरीर एक झटके में प्रागैतिहासिक मानव के रूप में बदला और दूसरे झटके में उनके सामान्य रूप में आ गया। स्वामी जी रुके, कहीं इससे आगे... पर नहीं, आधे घण्टे बाद भी शैलायन का शरीर पूर्ववत स्थिति में बना रहा।

स्वामी जी के मुँह पर मन्द स्मित तैर गया। उन्होंने प्रयोगकक्ष से बाहर निकलकर शैलायन के घर फोन लगाया। सुबह के कोई तीन बजे थे।

'ट्रिंग ट्रिंग!'

श्यामली ने अधीरता के साथ फोन उठाया। "श्यामली, मैं अध्यात्मानन्द बोल रहा हूँ। आप आश्वस्त हो जाएँ, प्रयोग सफल रहा है।"

"मैं... मैं आपका..."

"आभार प्रकट करने की कोई आवश्यकता नहीं है, श्यामली।"

श्यामली को लगा जैसे उनके शब्द लम्बी गुफा के सुदूर उजियारे कोने से आ रहे हों। स्वामी जी कहते गए, "मैं आपकी मनोदशा समझ रहा हूँ, पर इस वक्त यह आवश्यक है कि आप यहाँ आ जाएँ। मैं खुदाबख्श को

आपके पास भेज रहा हूँ। आपके आने के बाद मैं आवश्यक काम से बाहर जाना चाहूँगा।"

अपने आँसू पोंछ श्यामली तैयार हुई। खुदाबख्श अब आते ही होंगे। उन्होंने मेज़ पर से शैलायन का एक फोटो उठाकर अपने पर्स में डाला और रसोईघर का रुख किया। सोती डुखनी को जगाकर कुछ निर्देश दिए और गाड़ी में बैठ गई। उसका मन मानो हवा में तैर रहा हो। प्रयोगकक्ष के बाहर बैठे स्वामी जी उसे देवता समान महसूस हुए। वह मन ही मन उस घटना को याद कर झेंप गई जब इन्हीं स्वामी जी को उसने 'मरदूद' की उपाधि दी थी।

"क्या वो बिलकुल...?" उसके अपेक्षित प्रश्न को बीच में ही काटते हुए स्वामी जी ने कहा, "जी श्यामली, शैलायन बिलकुल सौ फीसदी पूर्व रूप में आ गए हैं। पर पहले दो महत्वपूर्ण बातें - पहली यह कि वे शायद एक घण्टा और सोएँ, और दूसरी कि इस परिवर्तन का निर्णय मेरा अपना था और वह भी आपके सुझाव के पूर्व लिया जा चुका था। पर शैलायन शायद इस बात को न मान पाएँ, अतः उनके उठने पर यह चिट्ठी उन्हें दे दें।"

"पर आप?" उनकी प्रश्नार्थक मुद्रा के जवाब में हँसकर स्वामी जी ने कहा, "शायद मेरा यहाँ से जाना ही नियत था, पर आप चिन्ता न करें, खुदाबख्श मुझे छोड़कर चले आएँगे।"

"मैं तो आपका..." श्यामली को शब्द ही नहीं सूझ रहे थे।

"मैंने कहा न श्यामली, आभार प्रकट करना बिलकुल गैर-ज़रूरी है।"

उन्होंने अपनी घड़ी की ओर इशारा किया, "मेरे ख्याल में अब मेरे जाने का समय हो गया है, आपकी इजाज़त हो तो मैं चलूँ?"

"जी, पर आप जा कहाँ रहे हैं?" मुश्किल से श्यामली ने पूछा।

"एयरपोर्ट।" संक्षिप्त उत्तर मिला।

शैलायन की समझ में नहीं आ रहा था कि वे सपना देख रहे थे या सत्य। सामने उन्हें एकटक निहारती श्यामली पर उनकी पहली नज़र पड़ी थी और दूसरी, सामने रखे आईने पर। उन्होंने खुद को ज़ोर की चिकोटी काटी। वे जो भी देख रहे थे, सत्य था पर प्रयोगशाला में श्यामली? स्वामी जी? उन्होंने चारों ओर नज़र दौड़ाई। स्वामी जी नदारद रहे। रात के प्रयोग की बातें उनके दिमाग में तैर गई थीं। स्वामी जी को यहाँ होना चाहिए था। और यह परिवर्तन भी... उन्होंने फिर एक बार आईने में खुद को देखा।

"यह तुम ही हो।" श्यामली ने उनकी फोटो सामने की, "अपने पुराने रूप में।"

"तो यह तुम्हारी करतूत है!" शैलायन बिफर पड़े, "क्या ज़रूरत थी तुम्हें हमारे प्रयोग में दखलअन्दाज़ी देने की? और वो स्वामी जी? स्वामी जी कहाँ हैं?"

और श्यामली की आँखें अपमान से भर आईं। पर यह वाद-प्रतिवाद का समय नहीं था। शैलायन की यह प्रतिक्रिया स्वाभाविक ही थी। उसने अपने आप को सम्भाला और बोली, "स्वामी जी ने तुम्हारे नाम यह चिट्ठी दी है।" हैरानी से शैलायन ने चिट्ठी पढ़ी –

'प्रिय शैलायन,

हमारे पिछले प्रयोग के बाद भी मैं सवेरे की उड़ान से चला गया था, आज भी वही कर रहा हूँ। गन्तव्य भी वही है। पिछले प्रयोग के परिणाम दोनों के लिए अनपेक्षित थे, इस प्रयोग के परिणाम तुम्हारे लिए अनपेक्षित हैं। तुम्हारा गुस्सा लाज़मी है और यह गलतफहमी भी कि श्यामली इसके लिए ज़िम्मेदार है। पर यह भ्रम मन से निकाल दो। यह निर्णय मैंने उससे मिलने के पहले ही ले लिया था। इसमें तुम्हारे खिलाफ किसी साज़िश की कोई सोच नहीं है। इसके कारण अलग ही हैं। अगर हम लोग फिर मिले तो मैं ज़रूर बताऊँगा, पर अब पता नहीं हम लोग मिलेंगे भी या नहीं। तुम्हारे साथ इस प्रयोग के सन्दर्भ में हुई पहचान और हमारी चर्चाएँ एक सुखद और अविस्मरणीय अनुभव रहा, पर अब उसके समाप्त होने का समय शायद आ गया है। यह तो तुमने पढ़ा ही होगा –

यथा काष्ठं च काष्ठं च समेयातां महोदधौ।

समेत्य च व्यपेयातां तद्वद्भूतसमागमः॥

जिस तरह लकड़ी के दो खण्ड महासागर में तैरते-तैरते एक-दूसरे के पास आ जाते हैं और पास आकर

फिर अलग हो जाते हैं, संसार-रूपी-समुद्र में भी जीवों का मिलना-बिछड़ना होता रहता है। बस, हम लोग भी अब अपने अलग-अलग मार्गों पर निकल रहे हैं। हाँ, जाते-जाते तुम्हारे लिए एक सलाह ज़रूर है कि उत्क्रान्ति को अपनी राह चलने दो।

तुम्हारा अध्यात्मानन्द'

***

फटी-फटी आँखों से शैलायन उस पत्र को देखते रह गए। श्यामली ने मौन भंग किया, "घर चलें?"

गाड़ी में बैठते-बैठते शैलायन ने श्यामली के हाथ के फ्लास्क की ओर देखकर पूछा, "इसमें क्या है?"

"हमारा नींबू पानी।" श्यामली ने पूछा, "पियोगे?"

"नहीं..." भारी स्वर में शैलायन ने कहा, "इस वक्त, मेरे ख्याल से, मुझे सिगरेट की ज़रूरत है। खुदाबख्श..."

खुदाबख्श की आँखें जीवन में सिर्फ दो बार छलकी थीं। एक बार जब बेटी जन्मी थी और आज, जब उन्होंने शैलायन को सिगरेट और लाइटर थमाया था।

अन्तर्राष्ट्रीय ओलम्पिक समिति के अध्यक्ष ने जब अपने संस्मरण लिखे तो उन्होंने राजा रिपुदमन सिंह के उस टेलेक्स का मिलना अपने जीवन की सबसे यादगार घटना बताई थी जिसमें शैलायन के ठीक हो जाने का ज़िक्र था। आपात बैठक के ठीक एक दिन पहले उनको वह पोस्ट मिला था। उन्होंने शैलायन को भेजे अपने पत्र में श्यामली और अध्यात्मानन्द का लाख-लाख शुक्रिया अदा किया था जिन्होंने ओलम्पिक संगठन को एक मुश्किल कगार से उभार लिया था। पर हाँ, उन्होंने यह पेशकश समिति की ओर से सहर्ष की थी कि शैलायन, श्यामली और मेघना, यही नहीं, राबिया जमाल भी मय परिवार समिति के अतिथियों के रूप में अगले ओलम्पिक देखने ज़रूर आएँ।

शैलायन तय नहीं कर पा रहे थे कि यह घटना वाकई शुक्रिया अदा करने योग्य थी या नहीं। उनके दिमाग में द्वन्द्व चलता रहता था कि क्या उन्होंने ज्ञान के नए भण्डार की थाह लेने का मौका खो दिया है या नहीं। मेघना के दिमाग में ऐसी कोई उधेड़बुन नहीं थी। वह खुश थी कि उसके पापा भी उसे वापस मिल गए और ओलम्पिक देखने का मौका भी। अच्छा हुआ पापा वापस आदमी बन गए, ओलम्पिक मेडल में क्या रखा है, कहीं हमेशा के लिए बन्दर रह जाते तो?

श्यामली खुश थी पर उसके पास शैलायन के द्वन्द्व का समाधान नहीं था। वे अक्सर अन्तर्मुखी हो जाया करते। उनके बीच के सम्बन्ध अभी भी सहज नहीं हो पाए थे। कई बार देर रात तक शैलायन अपने अध्ययन-कक्ष में बैठे रहते। श्यामली को उन्हें जगाकर ज़बरदस्ती सोने के कमरे में लाना पड़ता था। उस रात भी शैलायन

अपने अध्ययन-कक्ष में देर रात बैठे हुए थे। अचानक दरवाज़ा खुला और श्यामली आई, और उनके पीछे अध्यात्मानन्द जी। शैलायन चौंके, "अध्यात्मानन्द जी, आप! मैंने तो उम्मीद ही..."

"छोड़ दी थी, यही न?" स्वामी ने स्मित किया, "मुझे आना पड़ा तुम्हारे मन के अन्तर्द्वन्द्व के कारण। तुम खुश नहीं हो।"

"आपने अपना वचन नहीं निभाया, स्वामी जी। यही नहीं, हमने कितना बड़ा अवसर खो दिया एक नए आविष्कार का, नए अध्ययन का..." शैलायन की बेसब्री होठों पर आ ही गई।

"कई बार ज्ञान के साथ-साथ अन्य भावनाओं का भी विचार करना पड़ता है, शैलायन," स्वामी जी बोले।

"हाँ-हाँ, भावनाएँ! फिज़ूल की बातें! आप तो विज्ञान के छात्र रह चुके हैं! आपका यह कहना..."

"तुम स्वयं केन्द्रित रहे... कभी मेरा ख्याल किया?" श्यामली ने कहा।

"हाँ, तुम्हारा ख्याल? क्या कमी थी तुम्हें? मैं क्या कहीं भागा जा रहा था? और मान लो, मैं एक-दो साल के लिए कहीं बाहर गया होता तो..."

"ये ऐसे नहीं समझेंगे, श्यामली!" अध्यात्मानन्द क्रोधित हो गए, "ठीक है! ज्ञान के पिपासु! तुम्हें अध्ययन ही करना है न, लो करो! और निकालो अपने मन की भड़ास!" उन्होंने हाथ के जल को लेकर अभिमंत्रित किया और श्यामली पर छिड़का।

जब तक शैलायन कुछ समझ पाते, श्यामली की जगह एक बन्दर ने ले ली थी, नहीं यह तो चिम्पैंज़ी भी नहीं था। उन्होंने फटी-फटी आँखों से देखा। उनके सामने एक ओरांगुटान खड़ा था, श्यामली के कपड़े पहने और स्वामी जी अन्तर्ध्यान हो चुके थे। ओरांगुटान मुस्कराया और शैलायन से दूर जाने लगा। "यह लो, मैं हूँ तुम्हारे प्रयोग की सफलता!" दूर-दूर-दूर, वह ओरांगुटान शैलायन से बहुत दूर होता जा रहा था।

"नहीं!" शैलायन चीखे, "श्यामू!"

* * *

"क्या हुआ? यूँ चिल्ला क्यों रहे हो?" श्यामली उनके कन्धे झकझोर रही थी। उन्होंने देखा श्यामली उनके सामने, उनके नज़दीक, मानव रूप में मौजूद थी। हमेशा की तरह, हमेशा से। उन्होंने आँखें मलीं। श्यामली अपनी जगह बरकरार रही। वह ओरांगुटान और स्वामी जी... शैलायन आश्वस्त हुए - यह एक स्वप्न था।

श्यामली को बाहों में भरकर उन्हें यकीन आया। उन्होंने उसके होंठ चूम लिए। हैरान श्यामली कृत्रिम गुस्सा दिखाते हुए बोली, "क्या कर रहे हो?"

"कुछ नहीं, शीरीं लबों का मतलब भूल गया था। एक साथी का मतलब भूल गया था। फिर याद कर रहा हूँ।

मुझे माफ कर सकोगी, श्यामू?" शैलायन ने सजल आँखों के साथ कहा। और इस बार शैलायन के सुलझे हुए अन्तर्द्वन्द्व की मुहर श्यामली ने उनके होठों पर लगा दी।

(सन् 1980 में लिखी गई)

सतीश बलराम अग्निहोत्री: भारतीय प्रशासनिक सेवा के भूतपूर्व अधिकारी और अब आई.आई.टी. मुम्बई में प्राध्यापक। जन्म रत्नागिरी ज़िले के देवरुख गाँव में हुआ। बचपन बिहार के दरभंगा शहर में गुज़रा जहाँ स्कूल और कॉलेज की पढ़ाई की। इसके बाद आई.आई.टी. मुम्बई से फिज़िक्स और फिर पर्यावरण विज्ञान में एम.टेक. किया। 1980 से भारतीय प्रशासनिक सेवा में ओडिशा राज्य एवं केन्द्र सरकार में कई विशिष्ट पदों पर 35 साल सेवारत रहे। हिन्दी में विज्ञान कहानियाँ और लेख लिखने की शुरुआत तब की जानी-मानी पत्रिका 'धर्मयुग' से हुई। यह विज्ञान-कथा भी उसी युग में लिखी गई अप्रकाशित रचना है। उनकी रचनाएँ www.satishagnihotri1955.in पर उपलब्ध हैं।

सभी चित्र: उर्वी: चित्रकार, विज़ुअल कलाकार और डिज़ाइनर हैं। सृष्टि इंस्टिट्यूट ऑफ आर्ट एण्ड डिज़ाइन टेक्नोलॉजी, बैंगलोर से अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद अब वे अपने काम के ज़रिए एनिमेशन, मूविंग इमेजिज़, कहानी कहन और कविता का सहारा लेते हुए शिक्षा, सामाजिक न्याय और संरक्षण को जानने-समझने की कोशिश कर रही हैं।

50 YEARS of HSTP
होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम

सवालीराम

सवाल: समुद्र में चक्रवात क्यों बनते हैं?

जवाब: संदर्भ के पिछले अंक में समुद्र में उठने वाले चक्रवात और उनके नामकरण पर कुछ बातचीत हो चुकी है। उसके साथ ही जुड़ा सवाल था कि समुद्र में चक्रवात क्यों बनते हैं, तो इस बार समुद्र में बनने वाले चक्रवात को लेकर कुछ बातचीत करते हैं।

जब हम चक्रवात कहते हैं तो हवा के सर्पिलाकर घूमने (चक्र) जैसा कुछ आभास मिलता है। भारत में पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक, महाराष्ट्र और गुजरात वे राज्य हैं जिनके तटीय इलाकों का हर साल इन चक्रवातों से सामना होता है। अन्य राज्यों का इन तूफानों की वजह से होने वाली बेमौसम बारिश से ही वास्ता पड़ता है। दुनिया में ज़्यादातर चक्रवात उष्णकटिबन्धीय क्षेत्र (0° से 23.5°) या उपोष्णकटिबन्धीय क्षेत्र (23.5° से 40° उत्तर और दक्षिण अक्षांश) में ही निर्मित होते हैं।

जब हम धरती को एक ग्लोब के रूप में देखते हैं तो पाते हैं कि भूमध्यरेखा के आसपास के इलाकों को सालभर सूर्य की अधिकतम ऊष्मा प्राप्त होती है। इस वजह से इस इलाके की हवा गर्म होकर ऊपर उठती जाती है और वहाँ कम दबाव के क्षेत्र बन जाते हैं। 30° उत्तरी और दक्षिणी अक्षांश से अपेक्षाकृत ठण्डी हवाएँ भूमध्यरेखीय इलाकों के कम दबाव वाले क्षेत्रों की ओर आती हैं। इसी तरह 66° उत्तरी और दक्षिणी अक्षांश के आसपास के इलाके की हवा गरम होकर ऊपर उठती है और वहाँ ध्रुवीय इलाकों की ओर से ठण्डी हवा आती है।

इसी के आधार पर चक्रवात का एक सरल मॉडल विकसित किया जा सकता है।

इसके अनुसार सूरज की किरणों से समुद्र की सतह गर्म होती है और गर्म हवा और वाष्प वायुमण्डल में ऊपर की ओर उठती है। इस वजह से बन रहे कम दबाव के क्षेत्र को भरने के लिए आसपास के अधिक दबाव के क्षेत्र से हवाएँ यहाँ आती हैं। यही तेज़ रफ्तार से चलने वाली आँधी का कारण है। अब सवाल यह है कि ये हवाएँ गोल-गोल घूमती क्यों हैं।

चक्रवात में हवाओं की सर्पिलाकार गति का कारण पृथ्वी की अपनी धुरी पर घूमना है। देखते हैं कैसे। पृथ्वी की घूर्णन गति भूमध्य रेखा से ध्रुवों पर एक-समान नहीं होती। यह तो

बेहतर होगा यदि आप इस जवाब को पढ़ते समय अपने पास दुनिया का नक्शा या ग्लोब भी रख सकें। इस नक्शे में भूमध्यरेखा, कर्क रेखा, मकर रेखा, 66.5° डिग्री की अक्षांश रेखा एवं ध्रुवीय इलाकों को देखकर पहचानिए। भूमध्यरेखा से कर्क रेखा और मकर रेखा तक के इलाके को उष्णकटिबन्धीय इलाका कहा जाता है। इसी तरह कर्क रेखा से 40° उत्तर और मकर रेखा से 40 डिग्री दक्षिण अक्षांश के बीच का भाग उपोष्णकटिबन्ध कहलाता है। 40° से 66.5° अक्षांश तक का भाग समशीतोष्णकटिबन्धीय इलाका कहलाता है।

सब जानते हैं कि पृथ्वी 24 घण्टे में अपनी धुरी पर एक चक्कर पूरा कर लेती है। लेकिन भूमध्य रेखा पर पृथ्वी मोटी है और ध्रुवों की ओर बढ़ें तो वह दुबली होती जाती है – किसी भी गोलाकार पिण्ड के साथ यही होगा। ऐसे में भूमध्य रेखा का हर बिन्दु 24 घण्टे में बहुत ज़्यादा दूरी तय करता है, बनिस्बत ध्रुव पर स्थित किसी बिन्दु के। और इन गतियों के बीच अन्तर बहुत अधिक है – भूमध्य रेखा का बिन्दु प्रति घण्टे करीब 1600 किलोमीटर दौड़ता है, जबकि ध्रुव पर स्थित कोई बिन्दु मात्र 0.00008 किलोमीटर प्रति घण्टे की रफ्तार से सरकता है।

पृथ्वी से जुड़ी वस्तुएँ तो पृथ्वी के साथ-साथ इन्हीं गतियों से चलती हैं लेकिन पृथ्वी से दूर (उससे सीधे न जुड़ी) वस्तुओं के मामले में बात अलग हो जाती है। यदि कोई वस्तु उत्तरी ध्रुव से सरल रेखा में फेंकी जाए तो जब वह भूमध्य रेखा पर गिरती है तब तक सरल रेखा पर स्थित भूमध्य रेखा का बिन्दु काफी आगे निकल चुका होता है। इसलिए वस्तु उन बिन्दुओं को जोड़ने वाली सरल रेखा के अन्तिम बिन्दु पर नहीं, बल्कि उससे हटकर गिरेगी। इस विचलन को 'कोरिओलिस प्रभाव' कहते हैं (चित्र-1)।

अब भूमध्य रेखा पर बने कम दबाव के क्षेत्र में हवाएँ ध्रुवों की ओर से आ रही हैं। इसलिए वे भी विचलित हो जाती हैं। यदि इन हवाओं को ऊपर से देखा जाए, तो उत्तरी गोलार्ध में वे घड़ी की दिशा के उल्टी ओर विचलित होती हैं। यही कारण है कि उत्तरी गोलार्ध के चक्रवात घड़ी के विपरीत दिशा में घूमते हैं। दक्षिणी गोलार्ध में स्थिति इसके ठीक उलट होती है और हवाएँ घड़ी की दिशा में घूमती हैं।

यहाँ तक आते-आते हो सकता है, आप सोचने लगे हों कि समुद्र का पानी तो रोज़ गरम होता ही है, वाष्पन भी होता रहता है। तो रोज़ ही चक्रवात निर्मित होने चाहिए, लेकिन ऐसा होता तो नहीं है। दुनिया भर में औसतन हर साल 80 चक्रवात बनते हैं। यदि भारत के सन्दर्भ में बात की जाए तो अरब सागर व बंगाल की

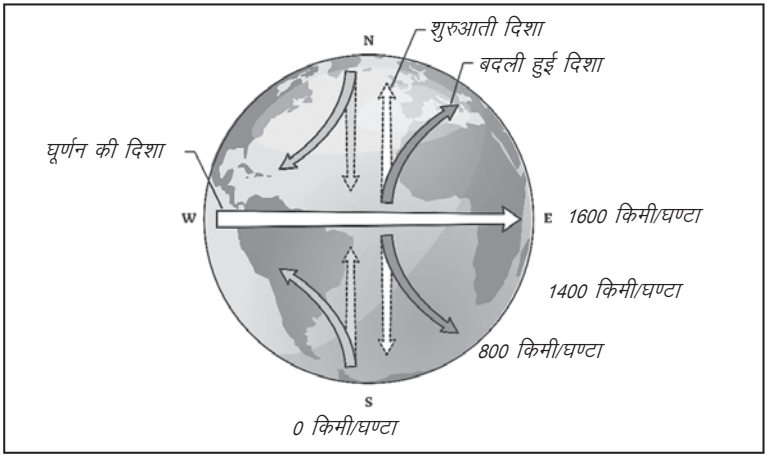

चित्र-1: *यहाँ एक रेखाचित्र की मदद से कोरिओलिस बल को समझाने की कोशिश की जा रही है। पृथ्वी अपनी धुरी पर पश्चिम से पूर्व चक्कर लगा रही है। धरती के साथ वायुमण्डल भी घूम रहा है। लेकिन चक्कर लगाते हुए पृथ्वी की रोटेशनल गति भूमध्यरेखा पर सर्वाधिक (1600 किलोमीटर प्रति घण्टा) और ध्रुवीय इलाकों तक पहुँचते-पहुँचते चन्द किलोमीटर रह जाती है। गति के इस अन्तर की वजह से ध्रुवीय इलाके से भूमध्यरेखा की ओर आने वाली या जाने वाली हवाओं की दिशा में विचलन आता-जाता है। यही विचलन चक्रवात में सर्पिलाकार हवाओं के विकास में मदद करता है।*

खाड़ी में प्रतिवर्ष औसतन 5 चक्रवात आते हैं। भारत में आने वाले चक्रवात आम तौर पर अप्रैल-मई-जून या अक्टूबर-नवम्बर महीने में आते हैं।

कुछ कारक हैं जिनसे चक्रवात बनने की सम्भावना ज़्यादा होती है। चक्रवात मुख्य रूप से उष्णकटिबन्धीय और उपोष्णकटिबन्धीय क्षेत्रों में बनते हैं जहाँ समुद्र की सतह का तापमान आम तौर पर 26.5° सेल्सियस या इससे अधिक होता है। ये क्षेत्र आम तौर पर विशिष्ट अक्षांशों के भीतर पाए जाते हैं - भूमध्य रेखा के उत्तर और दक्षिण में 5 से 20 डिग्री के बीच। समुद्र का गर्म पानी चक्रवात के विकास को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक गर्मी और नमी प्रदान करता है। इन अक्षांशीय पट्टियों के बाहर या जहाँ समुद्र की सतह का तापमान पर्याप्त रूप से गर्म नहीं होता, वहाँ चक्रवात बनने की सम्भावना कम होती है।

अभी भी हमें चक्रवातों के निर्मित होने के बारे में और कई बातें जानना हैं। उदाहरण के लिए, जलवायु परिवर्तन की वजह से चक्रवातों के बनने की आवृत्ति बढ़ी है। करंट साइंस पत्रिका के फरवरी 2001 अंक में लेखक ओ.पी. सिंह एवं तारिक मसूद ने 1877-1998 के दौरान बंगाल

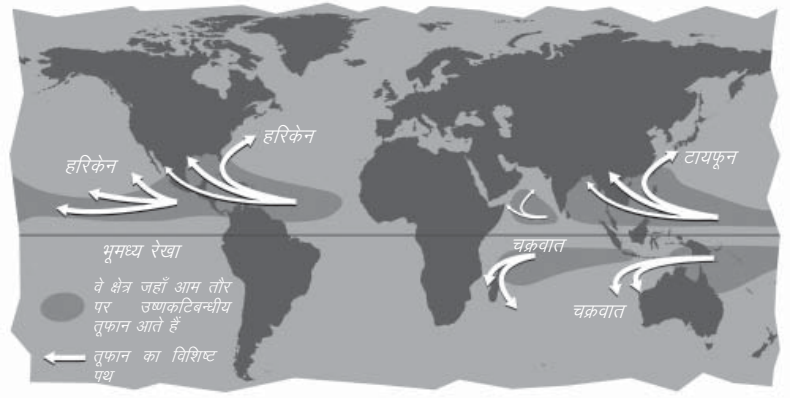

चित्र-2: *चक्रवात बनने के प्रमुख क्षेत्र - दुनिया के इस नक्शे को ध्यान से देखेंगे तो इसमें बीच से गुज़रती सीधी रेखा - भूमध्यरेखा दिखती है। साथ में, प्रमुख महाद्वीप भी दिखाए गए हैं। इन सबके बीच में तीर के निशान से समुद्र में उठने वाले विविध चक्रवातों को दिखाया गया है। साथ ही, विशिष्ट इलाकों में चक्रवातों के विशिष्ट नाम भी हैं जैसे हरिकेन (प्रशान्त महासागर, अटलांटिक महासागर), टायफून (प्रशान्त महासागर) आदि। आपने गौर किया होगा कि अधिकांश चक्रवात उष्णकटिबन्धीय इलाके में हैं।*

की खाड़ी और अरब सागर में आए चक्रवातों का अध्ययन कर बताया है कि इस अवधि में चक्रवातों की आवृत्ति बढ़ी है।

इसी तरह डाउन टू अर्थ पत्रिका के अनुसार आम तौर पर बंगाल की खाड़ी में तो काफी चक्रवात आते रहे हैं लेकिन अरब सागर जिसे अपेक्षाकृत शान्त समुद्र समझा जाता था, अब उतना शान्त नहीं रहा। नेहा यादव अपने लेख में बताती हैं कि साल 1891-2000 के दौरान अरब सागर में 24 गम्भीर चक्रवात उठे। लगभग चार साल में एक। लेकिन पिछले एक दशक में अरब सागर में हर दो साल में एक गम्भीर चक्रवात उठा है।

माधव केलकर: *संदर्भ* पत्रिका से सम्बद्ध हैं।

इस बार का सवाल: सोडा डालने पर चने जल्दी क्यों पक जाते हैं?

– उज्जैन, म.प्र.

आप हमें अपने जवाब sandarbh@eklavya.in पर भेज सकते हैं।

प्रकाशित जवाब देने वाले शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं अन्य को पुस्तकों का गिफ्ट वाउचर भेजा जाएगा जिससे वे पिटाराकार्ट से अपनी मनपसन्द किताबें खरीद सकते हैं।

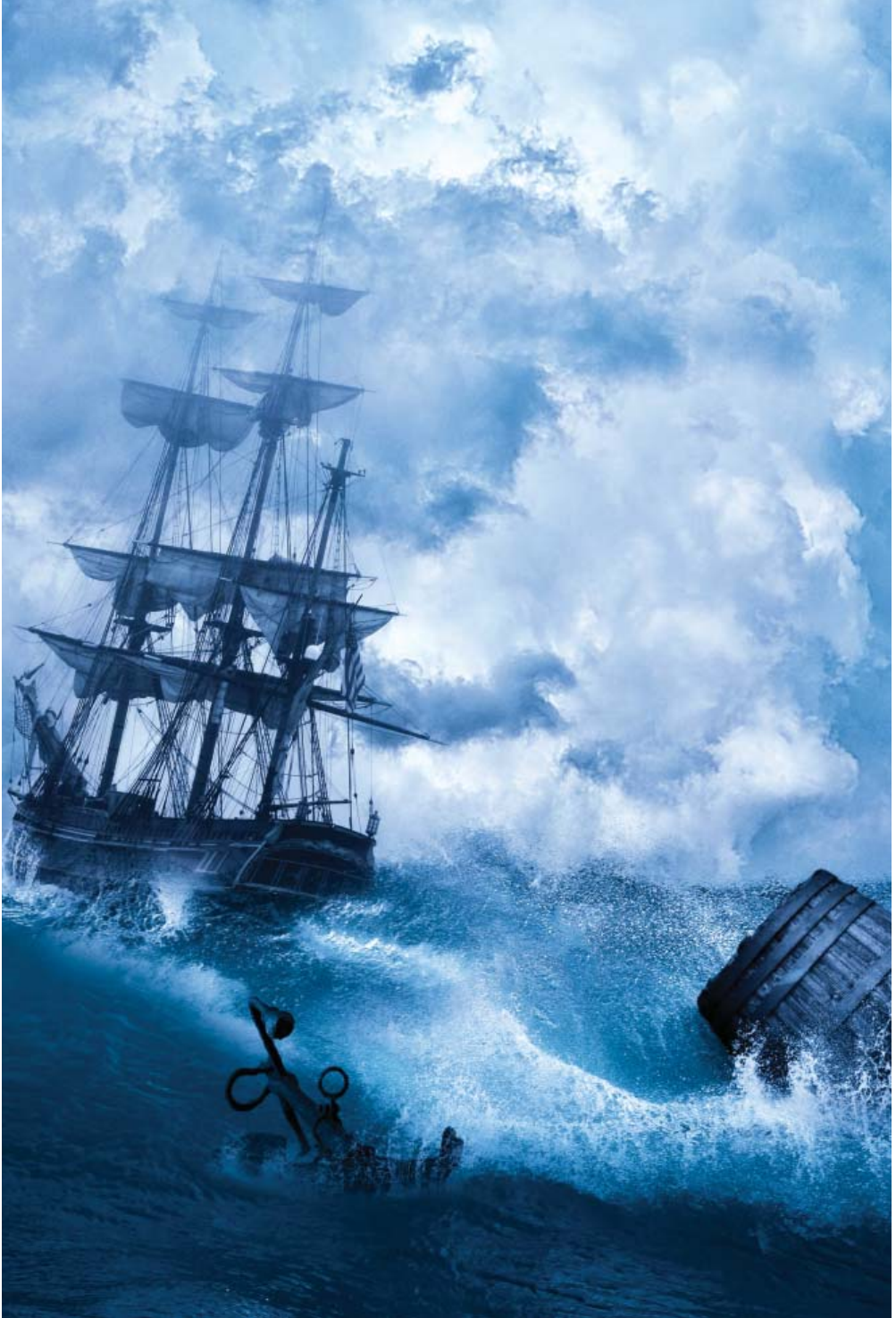

RNI No.: MPHIN/2007/20203

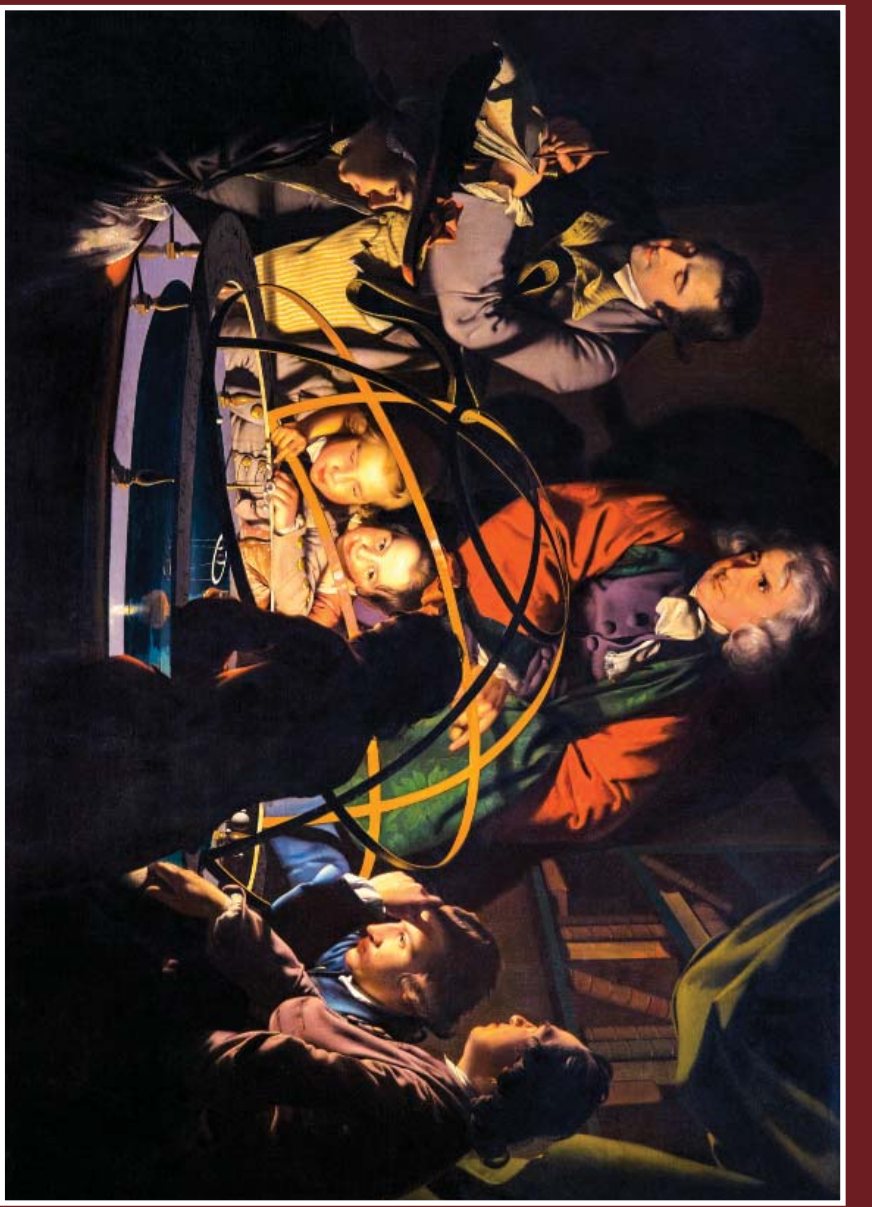

प्रकाशक, मुद्रक, टुलटुल बिस्वास द्वारा निदेशक एकलव्य फाउण्डेशन की ओर से, एकलव्य, जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी, भोपाल - 462 026 (म.प्र.) से प्रकाशित तथा भण्डारी प्रेस, ई-2/111, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462 016 (म.प्र.) से मुद्रित, सम्पादक: राजेश खिंदरी।